राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर पीठ

खंडपीठ विशेष सिविल रिट याचिका संख्या 81/2020

में

एकलपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 5718/1998

1. उप सचिव प्रशासन, शासन सचिवालय, जयपुर के माध्यम से राजस्थान राज्य।

2. सचिव, आयुर्वेद विभाग, भारत सरकार। राजस्थान के जयपुर.

3. निदेशक, आयुर्वेद विभाग, राजस्थान सरकार, अजमेर।

----अपीलार्थी/प्रत्यर्थीगण

बनाम

1. डॉ. श्री कृष्ण जोशी पुत्र श्री कैलाश चन्द्र जोशी, ग्राम गंडाला, तहसील बहरोड़, जिला अलवर।

2. डॉ. श्री मोहन शर्मा, पुत्र श्री राम नारायण शर्मा, जवाहर बाजार, टोंक, वर्तमान में प्लॉट संख्या 64, गोपी नगर, सांगानेर, जयपुर में रहते हैं।

----गैर-अपीलार्थीगण/याचिकाकर्तागण

3. राजस्थान लोक सेवा आयोग, अजमेर।

4. डॉ. सुरेंद्र कुमार पुत्र श्री रघुवीर सिंह गोठवाल, जिला मुख्य चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अलवर के अधीन पदस्थ, जिला अलवर।

5. डॉ. बाबू लाल मीना पुत्र श्री तुलसी राम मीना, बंबोरी, जिला बूंदी में पदस्थ।

----प्रत्यर्थीगण/गैर-अपीलार्थीगण

खंडपीठ विशेष अपील रिट संख्या 130/2020

में

एकलपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 5718/1998

राजस्थान लोक सेवा आयोग, अजमेर

याचिकाकर्ता/अपीलार्थी

बनाम

1. डॉ. श्री कृष्ण जोशी पुत्र श्री कैलाश चन्द्र जोशी, ग्राम गंडाला, तहसील बहरोड़, जिला अलवर।

2. डॉ. श्री मोहन शर्मा, पुत्र श्री राम नारायण शर्मा, जवाहर बाजार, टोंक, वर्तमान में प्लॉट

संख्या 64, गोपी नगर, सांगानेर, जयपुर में रहते हैं।

----प्रत्यर्थी/याचिकाकर्ता

3. उप सचिव प्रशासन, सरकार के माध्यम से राजस्थान राज्य। सचिवालय, जयपुर।

4. सचिव, आयुर्वेद विभाग, भारत सरकार। राजस्थान के जयपुर.

5. निदेशक, आयुर्वेद विभाग, राजस्थान सरकार, अजमेर।

6. डॉ. सुरेंद्र कुमार पुत्र श्री रघुवीर सिंह गोठवाल, जिला मुख्य चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अलवर के अधीन पदस्थ, जिला अलवर।

7. डॉ. बाबू लाल मीना, पुत्र श्री तुलसी राम मीना, पदस्थापित बंबोरी, जिला बूंदी।

---प्रोफार्मा/प्रत्यर्थीगण

अपीलार्थी (गण) की ओर से	:	श्री चिरंजी लाल सैनी, अतिरिक्त महाधिवक्ता, सुश्री सृजना श्रेष्ठ अधिवक्ता के साथ। श्री एम.एफ. बेग अधिवक्ता
प्रत्यर्थी (गण) की ओर से	:	श्री आर.एन. माथुर, वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री अश्विनी कुमार जैमन अधिवक्ता।

माननीय न्यायमूर्ति मनिन्द्र मोहन श्रीवास्तव
माननीय न्यायमूर्ति अनूप कुमार ढांड

<u>निर्णय</u>

रिपोर्टेबल

13/12/2022

<u>मनिन्द्र मोहन श्रीवास्तव, न्यायमूर्ति</u>

1. ये अपीलें विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 26.09.2019 के आदेश के खिलाफ निर्देशित हैं, जिसके तहत, प्रत्यर्थीगण द्वारा दायर रिट याचिका को अपीलार्थीगण को वर्ष 1997 की चयन सूची के तहत नियुक्ति के लिए निजी प्रत्यर्थीगण पर विचार करने का निर्देश देने की अनुमति दी गई है। जैसा कि राजस्थान लोक सेवा आयोग ('संक्षेप में 'आरपीएससी') द्वारा वरिष्ठता के सभी परिणामी लाभों के साथ प्रकाशित किया गया था, हालांकि सेवा को सभी उद्देश्यों के लिए और साथ ही वेतन के अनुमानित निर्धारण के लिए काल्पनिक माना जाना था, वास्तविक लाभ केवल होना था नियुक्ति की तारीख से दिया गया।

2. अपील में शामिल विवाद के निर्णय के लिए आवश्यक प्रासंगिक तथ्यात्मक मैट्रिक्स

यह है कि आरपीएससी द्वारा 05.08.1996 को होम्योपैथिक चिकित्सक के पद पर नियुक्ति के लिए आवेदन आमंत्रित करते हुए एक विज्ञापन जारी किया गया था। चयन प्रक्रिया अंततः पूरी हो गई और चयन सूची 03.10.1997 को प्रकाशित की गई, जिसमें 27 उम्मीदवारों को मुख्य सूची में रखा गया, जिसमें प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 (रिट याचिका में प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6) शामिल थे, जिन्हें चयन सूची में क्रमांक 25 एवं 26 पर रखा गया था। एक को अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित पद पर नियुक्ति के लिए चुना गया था, जबकि दूसरे को अनुसूचित जनजाति वर्ग के आरक्षित पद पर नियुक्ति के लिए चुना गया था। इसके अलावा, उसी तारीख को एक आरक्षित सूची भी प्रकाशित की गई जिसमें प्रत्यर्थी संख्या 1-रिट याचिकाकर्ता-डॉ. एस.के जोशी के नाम सहित 14 नाम शामिल हैं, जिन्हें क्रमांक 1 पर रखा गया था और प्रत्यर्थी क्रमांक 2-रिट याचिकाकर्ता-डॉ. श्री मोहन शर्मा जिन्हें क्रमांक 3 पर रखा गया था। नियुक्ति आदेश जारी कर चयन सूची संचालित की गई। हालाँकि, यहाँ प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 (रिट याचिका में प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6) सीधी भर्ती के रूप में सेवाओं में शामिल नहीं हुए। चूँकि आरक्षित सूची संचालित नहीं की गई थी, दो याचिकाकर्ता जिन्हें चयनित उम्मीदवारों के शामिल न होने के कारण उत्पन्न होने वाली उपलब्ध रिक्तियों के खिलाफ नियुक्त नहीं किया गया था, अर्थात प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 (रिट याचिका में प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6), अभ्यावेदन। इस पर कोई ध्यान नहीं दिया गया, रिट याचिकाकर्तागण द्वारा इस न्यायालय के समक्ष रिट याचिका दायर की गई।

3. रिट याचिकाकर्तागण ने अपना दावा प्रस्तुत किया और सरकार को इस आधार पर प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 (रिट याचिका में प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6) के शामिल न होने के कारण हुई रिक्त रिक्तियों के खिलाफ नियुक्त करने के लिए निर्देश देने की मांग की। यहां प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 (रिट याचिका में प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6) को शुरू में जूनियर होम्योपैथिक चिकित्सक के रूप में नियुक्त किया गया था और बाद में नियमों में संशोधन के बाद, उन्हें होम्योपैथिक चिकित्सक के रूप में नियमित नियुक्ति के लिए विचार किया गया और जांच की गई। मुख्य चयन सूची में उनके नाम शामिल करने का कोई अवसर नहीं है और उस स्थिति में, चयन सूची में आरक्षित सूची में रखे गए उम्मीदवारों को गुणागुण के क्रम में शामिल किया जाना चाहिए। रिट याचिकाकर्तागण द्वारा की गई मुख्य दलील यह थी कि आधिकारिक प्रत्यर्थीगण ने उन्हें अवैध रूप से चयन की प्रक्रिया से बाहर

कर दिया और रिट याचिका में उनकी दलीलों के अनुसार, 27 रिक्तियों में 6 और रिक्तियां शामिल की जानी चाहिए, जिन्हें भरने के लिए भर्ती की प्रक्रिया के माध्यम से विज्ञापित किया गया था।

रिट याचिकाकर्तागण की वैकल्पिक दलील यह थी कि किसी भी मामले में, चूंकि चयनित उम्मीदवार नियुक्ति की पेशकश के अनुसार शामिल नहीं हुए थे, इसलिए अधिकारियों को आरक्षित सूची संचालित करने की आवश्यकता थी।

4. उत्तर में, राज्य के साथ-साथ आरपीएससी का एक तर्क यह था कि इसमें प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 (रिट याचिका में प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6) के नाम शामिल करने में कोई अवैधता नहीं थी। चयन सूची क्योंकि उन्हें शुरू में जूनियर होम्योपैथिक चिकित्सक के रूप में नियुक्त किया गया था और होम्योपैथिक चिकित्सक के रूप में भर्ती नहीं किया गया था और केवल इसलिए कि उनके नियमितीकरण का मामला लंबित था, उन्हें आयुर्वेदिक चिकित्सक के पद पर सीधी भर्ती के माध्यम से चयन की प्रक्रिया में भाग लेने से इनकार नहीं किया जा सकता था। रिट याचिका के उत्तर में आधिकारिक प्रत्यर्थीगण का रुख यह था कि आरक्षित सूची केवल सीमित अवधि के लिए लागू थी और भर्ती और नियुक्ति की प्रक्रिया को नियंत्रित करने वाले नियमों के मद्देनजर, रिट याचिकाकर्ता नियुक्ति के लिए निर्देश जारी करने की मांग नहीं कर सकते थे और जैसा कि रिट याचिका में प्रार्थना की गई है, रिट याचिकाकर्ता राहत के पात्र नहीं थे। रिक्तियों को शामिल करने के पहलू पर, प्रत्यर्थीगण ने रिक्तियों के अस्तित्व से इनकार किया।

5. विद्वान एकल न्यायाधीश ने आक्षेपित आदेश द्वारा दो पहलुओं पर विचार किया। जहां तक रिक्तियों के निर्धारण का सवाल है, विद्वान एकल न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित किया कि चूंकि राज्य सरकार ने केवल 27 पदों की मांग की थी, इसलिए रिट याचिकाकर्तागण का दावा था कि पदों की संख्या 27 के बजाय 33 मानी जानी चाहिए थी, जिसे खारिज कर दिया गया।

6. जहां तक अन्य मानकों के रूप में यह निर्धारित करने की आवश्यकता है कि यहां आवेदकों को क्या रिट याचिकाकर्तागण करना है, प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 (रिटायर दाखिल में प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6) की विफलता के कारण होम्योपैथिक चिकित्सक के पद पर आवेदकों का दावा करने का विधिक अधिकार है। प्रस्ताव के तहत होने वाले प्रस्तावों में शामिल होने के लिए, कई निर्णयों पर अवलंब करते हुए, विद्वान एकल न्यायाधीशों ने

निष्कर्ष निकाला कि प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 (प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6) को प्रस्ताव की सहमति दी गई है, इसके बाद प्रतिभागिता सूची को संचालित करने की बात कही गई है। आवश्यकता थी। रिट फाइल) 22.04.1998 को। विद्वान एकल न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित किया कि सीमांत जाति और पर्वतीय जनजाति का वर्गीकरण यहां प्रत्यर्थी 4 और 5 (प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6) में शामिल है, जिसमें कोई भी पद रिक्त नहीं है, जिसमें कारण शामिल नहीं किया जा सकता है। इंस्टालेशन के इंस्टालेशन में पहला उदाहरण, क्योंकि उन्हें पहले से ही नियमितीकरण के गुटों के लिए जांच की गई थी, जिसके परिणामस्वरूप वर्ष 1989 में भी उनका नियमितीकरण हुआ, दो रिक्तियों को सामान्य प्रक्रिया का पालन करके ऑर्केलिनेशन सूची से भरना आवश्यक था। उन दो रिक्तियों के लिए कोई अन्य श्रेणी और श्रेणी जनजाति के उम्मीदवार उपलब्ध नहीं थे जो कि खाली रह गए थे।

7. विद्वान एकल न्यायाधीश ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि रिट याचिका के लंबित होने के कारण कई वर्षों के अंतराल के बाद भी रिट याचिकाकर्तागण को होम्योपैथिक चिकित्सकों की अधूरी रिक्तियों पर नियुक्ति का दावा करने का विधिक अधिकार था, इस मामले में उच्चतम न्यायालय के निर्णय **पुरूषोत्तम बनाम अध्यक्ष, एमएसईबी और अन्य (1999) 2 उच्चतम न्यायालय मामले (एल एंड एस) 1050** पर अवलंब किया।

8. विद्वान राज्य के अधिवक्ता ने विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश की वैधता पर हमला करते हुए सबसे पहले तर्क दिया कि चयन वर्ष 1997 से संबंधित था और भले ही रिट याचिका वर्ष 1998 में दायर की गई थी, क्योंकि उस समय तक प्रतीक्षा सूची पहले ही आ चुकी थी। **राजस्थान आयुर्वेदिक, यूनानी, होम्योपैथी और प्राकृतिक चिकित्सा सेवा नियम, 1973 (संक्षेप में '1973 के नियम')** में निहित प्रावधानों के मद्देनजर कानून के संचालन से समाप्त हुए, दाखिल होने के 20 से अधिक वर्षों के बाद कोई राहत नहीं दी जा सकी। रिक्तियों के खिलाफ रिट याचिका, जो बाद के वर्षों में भरी गईं, जैसा कि बाद के चरण में न्यायालय के समक्ष दायर शपथ-पत्र में कहा गया है, लेकिन विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश से पहले।

9. राज्य के विद्वान अधिवक्ता के साथ-साथ आरपीएससी के अधिवक्ता की अगली दलील यह थी कि विद्वान एकल न्यायाधीश का यह निष्कर्ष कि चयन सूची केवल मुख्य सूची में रखे गए उम्मीदवारों को नियुक्ति देकर पदों को भरने के बाद ही लागू होगी। 1973 के

नियमों के नियम 20 में निहित वैधानिक प्रावधानों और आरक्षित सूची की वैधता की योजना के खिलाफ है। उन्होंने कहा कि आरक्षित सूची उस तारीख से केवल छह माह की अवधि के लिए प्रभावी रही, जिस दिन मूल सूची अग्रेषित की गई थी। नियुक्ति प्राधिकारी को आयोग। चूंकि चयन सूची 16.10.1997 को राज्य सरकार को सिफारिश के लिए भेजी गई थी और छह माह की अवधि 15.04.1998 को समाप्त हो गई थी, इसलिए, रिट याचिकाकर्तागण के पास आरक्षित सूची के संचालन के लिए कोई दावा नहीं था और इस कारण से, राज्य सरकार द्वारा आरक्षित सूची से नाम नहीं मांगे गए थे, भले ही दो रिक्तियाँ खाली रह गईं। केवल चयन सूची या आरक्षित सूची में शामिल होने के आधार पर रिट याचिकाकर्तागण नियुक्ति का दावा नहीं कर सकते। अपनी दलीलों के समर्थन में, राज्य और आरपीएससी के विद्वान अधिवक्ता ने **श्री संजय भट्टाचार्जी बनाम भारत संघ और अन्य, (1997) 4 उच्चतम न्यायालय केस 283, राज ऋषि मेहरा और अन्य बनाम पंजाब राज्य और अन्य, (2013) 12 उच्चतम न्यायालय केस 243, गुजरात राज्य उप कार्यकारी अभियंता संघ बनाम गुजरात राज्य और अन्य, 1994 सप्लिमेंट (2) उच्चतम न्यायालय केस 591, म.प्र. विद्युत मंडल मुख्य अभियंता, म.प्र. ईबी और अन्य बनाम वीरेंद्र कुमार शर्मा, (2002) 9 उच्चतम न्यायालय केस 650, यूपी राज्य और अन्य बनाम हरीश चंद्र और अन्य, (1996) 9 उच्चतम न्यायालय मामले केस 309 और बिहार राज्य और अन्य बनाम मोहम्मद कलीमुद्दीन और अन्य, (1996) 2 उच्चतम न्यायालय केस 7 के मामलों में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णयों और महाराष्ट्र लोक सेवा आयोग बनाम पंकज कुमार सी. दाभिरे और अन्य के मामले में बॉम्बे उच्च न्यायाल का निर्णय, 2015 की रिट याचिका संख्या 5621 और अन्य संबंधित याचिका, 03.07.2018 को निर्णय लिया गया और डॉ. राकेश मीना बनाम राजस्थान लोक सेवा आयोग एवं अन्य, खंडपीठ के मामले में इस न्यायालय की खंडपीठ का निर्णय विशेष अपील रिट संख्या 1572/2017, दिनांक 03.04.2018** को निर्णित पर अवलंब किया है।

10. इसके विपरीत, सफल रिट याचिकाकर्तागण के प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता का तर्क होगा कि जिन सिद्धांतों पर विद्वान एकल न्यायाधीश ने प्रत्यर्थीगण को राहत दी है, वे विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा अवलंब किए गए निर्णयों के आधार पर सुस्थापित विधिक स्थिति पर आधारित हैं। प्रत्यर्थीगण के विद्वान वरिष्ठ

अधिवक्ता का कहना था कि अपीलार्थी-राज्य और आरपीएससी के अनुसार भी, चयन सूची 16.10.1997 को राज्य सरकार को सिफारिश के साथ भेजी गई थी, लेकिन यह 05.01.1998 से 20.04.1998 तक की अवधि के बीच संचालित नहीं हो सकी। इस न्यायालय द्वारा 05.01.1998 को एकलपीठ में पारित अंतरिम आदेश के कारण। विज्ञापन के तहत की गई नियुक्ति को चुनौती देते हुए डॉ. कमल नारायण गुप्ता नमक व्यक्ति द्वारा एकलपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 6702/1997 दायर की गई। वह रिट याचिका अंततः 20.04.1998 को खारिज कर दी गई। इस प्रकार, किसी भी स्थिति में, 05.01.1998 से 20.04.1998 तक की पूरी अवधि को छह माह की अवधि की गणना के प्रयोजनों के लिए शामिल नहीं किया जा सकता है। यहां प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 (रिट याचिका में प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6) को 22.04.1998 को नियुक्ति की पेशकश की गई थी, लेकिन वे इसमें शामिल होने में विफल रहे और इसलिए, केवल उस समय से, चयन सूची बाद में संचालित होगी। प्रस्ताव 22.04.1998 को प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 (रिट याचिका में प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6) को दिया गया था। इसलिए, यह तर्क दिया गया है कि चयन सूची क्रियाशील और वैध रही, लेकिन राज्य ने एक गलत धारणा पर कि चयन सूची समाप्त हो गई थी, आरपीएससी को आरक्षित सूची से नाम भेजने की आवश्यकता नहीं करने में अवैध रूप से कार्य किया। राज्य की ओर से इस निष्क्रियता के कारण, रिट याचिकाकर्तागण (यहां प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5) को आरक्षित सूची का संचालन करके नियुक्ति का पात्र माना गया। उन्होंने आगे कहा कि जब आरक्षित सूची लागू थी और वैध थी तो रिट याचिकाकर्तागण ने तुरंत इस न्यायालय से संपर्क किया और रिट याचिका के निर्णय में विलंब के लिए रिट याचिकाकर्तागण को जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता था, न ही उन्हें विलंब के आधार पर राहत से वंचित किया जा सकता **था।** विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा राहत देने के लिए जिन निर्णयों पर अवलंब किया गया था, उनके अलावा, प्रत्यर्थीगण-रिट याचिकाकर्तागण की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने **राजस्थान राज्य और अन्य बनाम सरिता चौधरी और अन्य (अपील के लिए विशेष अनुमति याचिका (सी) संख्या 10754/2016), जम्मू और कश्मीर राज्य और अन्य बनाम सत पाल, (2013) 11 उच्चतम न्यायालय मामले 737** के मामलों में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर अवलंब किया है **और निर्णय राजस्थान राज्य और अन्य बनाम सरिता चौधरी और अन्य, खंडपीठ सिविल विशेष अपील (डब्ल्यू) संख्या 29/2016** के

मामलों में प्रधान पीठ, जोधपुर में इस न्यायालय की खंडपीठ ने, 22.01.2016 को निर्णित, राजस्थान लोक सेवा आयोग सचिव, आरपीएससी जयपुर रोड, अजमेर बनाम कौशल कुमार गुप्ता और अन्य, **खंडपीठ विशेष अपील रिट संख्या 311/2017**, 18.04.2017 को निर्णित और राजस्थान लोक सेवा आयोग, अजमेर बनाम अलका अग्रवाल और अन्य, के मामलों में इस न्यायालय, जयपुर की खंडपीठ के निर्णय, **खंडपीठ विशेष अपील रिट संख्या 988/2016,** के निर्णय दिनांक 02.11.2017 के निर्णय, **राजस्थान लोक सेवा आयोग, अजमेर बनाम यशवन्त कुमार एवं अन्य, (2011) 2 आरएलडब्ल्यू (राज.) 1383, राजस्थान राज्य एवं अन्य बनाम घनश्याम खटीक एवं अन्य, खंडपीठ विशेष अपील रिट संख्या 1074/2018** और संबंधित अपील, 23.01.2019 को निर्णित और **राजस्थान राज्य और अन्य बनाम हुकमी चंद और अन्य खंडपीठ विशेष अपील (रिट) संख्या 1141/2015** और अन्य संबंधित अपीलों पर 02.06.2016 को निर्णित और **कौशल कुमार गुप्ता बनाम राजस्थान राज्य और अन्य, 2017 के मामलों में प्रिंसिपल, जोधपुर में इस न्यायालय की एकलपीठ का निर्णय (2) डब्ल्यूएलसी 559 और सरिता चौधरी बनाम राजस्थान राज्य और अन्य, 2016 (2) आरएलडब्ल्यू 1615 (राजस्थान) और अलका अग्रवाल बनाम राजस्थान राज्य और अन्य, सिविल के मामलों में इस न्यायालय, जयपुर की एकलपीठ का निर्णय 2011 की रिट याचिका संख्या 13084, 17.03.2016 को निर्णय, विजय चौधरी और अन्य बनाम राज्य और अन्य और संबंधित याचिकाएं, एकलपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 8650/07, दिनांक 22.05.2008 को निर्णय, घनश्याम खटीक बनाम राजस्थान राज्य और अन्य तथा अन्य संबंधित याचिकाएं, एकलपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 10730/2017,** 10.05.2018 को निर्णित और **रवींद्र पुरोहित और अन्य बनाम राजस्थान राज्य और अन्य, एकलपीठ 2015 की सिविल रिट याचिका संख्या 1781 और 2940, 04.08.2015** को निर्णित पर अवलंब किया है

11. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेखों का अवलोकन किया है और हमारे समक्ष प्रस्तुत विभिन्न तथ्यात्मक और विधिक प्रस्तुतियों पर उत्सुकतापूर्वक विचार किया है।

12. तथ्य, जिनपर विवाद नहीं है और रिकॉर्ड में स्वीकार किए गए हैं, यह है कि भर्ती होम्योपैथिक चिकित्सकों के 27 पदों को भरने के उद्देश्य से की गई थी, जो कि 1973 के

नियमों द्वारा शासित है। यह भी विवाद नहीं है कि मुख्य सूची में, प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 (रिट याचिका में प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6) को एस.एन.ओ. में उनकी संबंधित श्रेणी में आरक्षित पद 25 और 26 के खिलाफ अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के उम्मीदवारों के रूप में शामिल किया गया था। पक्षों के बीच यह भी विवाद नहीं है कि आरक्षित सूची (प्रतीक्षा सूची) में, प्रत्यर्थी संख्या 1-रिट याचिकाकर्ता-डॉ. एस.के जोशी को क्रमांक 1 पर रखा गया था और प्रत्यर्थी क्रमांक 2-रिट याचिकाकर्ता-डॉ. श्री मोहन शर्मा को क्रमांक 3 पर रखा गया। क्रम संख्या 2 पर रखे गए उम्मीदवार ने न्यायालय का रुख नहीं किया और कोई याचिका दायर करके कोई दावा नहीं किया है। यह भी विवादित नहीं है कि दोनों रिट याचिकाकर्ता सामान्य वर्ग से हैं।

13. वर्तमान मामले के निर्णय के लिए प्रासंगिक निर्विवाद तथ्यों का एक और तथ्य यह है कि आरपीएससी ने 16.10.1997 को राज्य सरकार को सिफारिशों के साथ मुख्य सूची भेज दी थी। यह भी विवाद नहीं है कि यहां प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 (रिट याचिका में प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6) अर्थात् डॉ. सुरेंद्र कुमार और डॉ. बाबू लाल मीना को नियुक्ति आदेश दिनांक 22.04.1998 के तहत नियुक्ति की पेशकश की गई थी, लेकिन उन्होंने नियुक्ति आदेश के अनुसरण में कोई कार्यभार ग्रहण नहीं किया।

14. हमारे लिए इस विवाद में पड़ना आवश्यक नहीं है कि क्या यहां प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 (रिट याचिका में प्रत्यर्थी क्रमांक 5 और 6) के नाम मुख्य चयन सूची से बाहर किए जाने योग्य थे कारण कि जूनियर होम्योपैथिक चिकित्सक के रूप में जारी रहने के दौरान, उन्हें नियमितीकरण के लिए जांचा गया और अंततः नियमित कर दिया गया क्योंकि भले ही यह मान लिया जाए कि वे चयन की प्रक्रिया में भाग लेने के पात्र थे और सीधी भर्ती के प्रयोजनों के लिए होम्योपैथिक चिकित्सक के पद पर चयन सूची में शामिल होने के पात्र थे। तथ्य यह है कि वे क्रमशः अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति श्रेणी के विरुद्ध नियुक्ति प्रस्ताव दिनांक 22.04.1998 के अनुसार शामिल नहीं हुए।

15. राज्य के विद्वान अधिवक्ता के साथ-साथ आरपीएससी के अधिवक्ता द्वारा अपनी-अपनी अपीलों में दिए गए मुख्य तर्कों में से एक यह है कि विद्वान एकल न्यायाधीश को रिट याचिका दायर करने के लगभग 20 वर्षों के बाद कोई राहत नहीं देनी चाहिए थी। खासकर तब जब वर्तमान मामले में विचाराधीन रिक्ति सहित सभी बैकलॉग रिक्तियां पहले ही भरी जा चुकी थीं।

16. अतिरिक्त शपथ-पत्र में इस बात का संबंध है कि क्या दो रिक्तियों के विरुद्ध प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 (रिट याचिका में प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6) को 22.04.1998 को नियुक्ति की पेशकश की गई थी, जिस पर वे शामिल नहीं हुए थे। 03.10.2016 को राज्य द्वारा दायर, विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश दिनांक 20.09.2016 के अनुपालन में, यह कहा गया है कि यद्यपि प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 ने (रिट याचिका में प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6) नियुक्ति आदेश दिनांक 22.04.1998 के अनुसरण में कार्यभार ग्रहण नहीं किया, शेष बैकलॉग रिक्तियां भी भरी गईं तथा होम्योपैथिक चिकित्सक के पद पर कोई बैकलॉग रिक्त नहीं है। इस आशय का दिनांक 04.07.2016 का एक पत्र भी रिकॉर्ड में रखा गया है। हालाँकि, राज्य द्वारा रिकॉर्ड पर ऐसा कुछ भी नहीं रखा गया है कि रिट याचिका दायर करने की तिथि पर रिक्तियां उपलब्ध नहीं थीं। रिट याचिकाकर्तागण द्वारा 03.11.1998 को रिट याचिका दायर की गई थी। इसलिए, कम से कम, यह कहा जा सकता है कि जिस तारीख को रिट याचिका दायर की गई थी, उस दिन रिक्तियां उपलब्ध थीं। जिन 27 पदों के लिए भर्ती हुई थी, उनमें से दो रिक्तियां यहां प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 (रिट याचिका में प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6) के शामिल न होने के कारण खाली रह गईं। अतिरिक्त शपथ-पत्र में इस बात का संबंध है कि क्या दो रिक्तियों के विरुद्ध प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 (रिट याचिका में प्रत्यर्थी क्रमांक 5 और 6) को 22.04.1998 को नियुक्ति की पेशकश की गई थी, जिस पर वे शामिल नहीं हुए थे। 03.10.2016 को राज्य द्वारा दायर, विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश दिनांक 20.09.2016 के अनुपालन में, यह कहा गया है कि हालांकि, प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 ने (रिट याचिका में प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6) नियुक्ति आदेश दिनांक 22.04.1998 के अनुसरण में कार्यभार ग्रहण नहीं किया, शेष बैकलॉग रिक्तियां भी भरी गईं तथा होम्योपैथिक चिकित्सक के पद पर कोई बैकलॉग रिक्त नहीं है। इस आशय का दिनांक 04.07.2016 का एक पत्र भी रिकॉर्ड में रखा गया है। हालाँकि, राज्य द्वारा रिकॉर्ड पर ऐसा कुछ भी नहीं रखा गया है कि रिट याचिका दायर करने की तिथि पर रिक्तियां उपलब्ध नहीं थीं। रिट याचिकाकर्तागण द्वारा 03.11.1998 को रिट याचिका दायर की गई थी। इसलिए, कम से कम, यह कहा जा सकता है कि जिस तारीख को रिट याचिका दायर की गई थी, उस दिन रिक्तियां उपलब्ध थीं। जिन 27 पदों के लिए भर्ती हुई थी, उनमें से दो रिक्तियां प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 (रिट याचिका में प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6) के शामिल नहीं होने के कारण खाली रह गईं।

17. क्या रिट याचिका लंबित होने के कारण इतने वर्षों के अंतराल के बाद रिट याचिकाकर्तागण को होम्योपैथिक चिकित्सक के पद पर नियुक्ति का दावा करने का विधिक अधिकार है, इस संबंध में एकल न्यायाधीश ने माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय **पुरूषोत्तम बनाम अध्यक्ष, एमएसईबी और अन्य (सुप्रा.)** पर अवलंब किया, जिसमें इसे निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया: -

> "4. प्रतिद्वंदी की दलील के मद्देनजर विचार के लिए यह प्रश्न उठता है कि क्या नियुक्ति के लिए विधिवत चयनित व्यक्ति और नियोक्ता की ओर से अस्थिर निर्णय के कारण अवैध रूप से रोजगार से बाहर रखे गए व्यक्ति को इस आधार पर उक्त नियुक्ति से वंचित किया जा सकता है कि इस बीच पैनल की अवधि समाप्त हो गई है। हमें अपीलार्थी की ओर से उपस्थित श्री देशपांडे के तर्क में पर्याप्त बल मिलता है क्योंकि इसमें कोई विवाद नहीं है कि अपीलार्थी का विधिवत चयन किया गया था और वह पद पर नियुक्त होने का पात्र था, लेकिन स्क्रीनिंग कमेटी के अवैध निर्णय के लिए इस बीच निर्णय लिया गया उच्च न्यायालय द्वारा पलट दिया गया है और उच्च न्यायालय का वह निर्णय अंतिम रूप में पहुँच गया है। जिस पद के लिए अपीलार्थी का चयन किया गया है, उसके विरुद्ध नियुक्ति का अधिकार इस बहाने से नहीं छीना जा सकता है कि उक्त पैनल इस बीच समाप्त हो चुका है और पद पहले ही किसी और द्वारा भरा जा चुका है। किसी अन्य द्वारा पद पर कब्ज़ा करना अपीलार्थी के किसी दोष के कारण नहीं है, बल्कि स्वयं नियोक्ता के गलत निर्णय के कारण है। मामले को ध्यान में रखते हुए, अपीलार्थी का पद पर नियुक्त होने का अधिकार नियोक्ता द्वारा अवैध रूप से छीन लिया गया है। इसलिए, हम उच्च न्यायालय के आक्षेपित आदेश और निर्णय को रद्द करते हैं और महाराष्ट्र राज्य विद्युत बोर्ड को अपीलार्थी को आज से दो माह के भीतर उस पद पर नियुक्त करने का निर्देश देते हैं जिसके लिए उसका विधिवत चयन किया गया था। हम यह स्पष्ट करते हैं कि नियुक्ति भावी प्रकृति की होगी।"

18. विद्वान एकल न्यायाधीश ने **कुदरत अली बनाम नगर परिषद, भीलवाड़ा और अन्य, 2007 (1) डब्ल्यूएलसी 90** के मामले में इस न्यायालय की खंडपीठ के निर्णय पर भी

अवलंब किया, जो इसी तरह की आकस्मिकता से निपटता था कि क्या लंबे समय के बाद राहत दी जा सकती है मामले के निर्णय में विलंब के कारण समय उपरोक्त निर्णय में, इसे निम्नानुसार रखा गया: -

> "9 ये तथ्य, जिन पर विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा ध्यान नहीं दिया गया है, स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि यह निष्कर्ष कि रिट याचिका दायर की गई है, वरिष्ठता सूची के प्रकाशन के 15 वर्ष बाद घोर लापरवाही बरती गई है, निराधार था। शायद 15 वर्ष की अवधि थी उस अवधि को भी शामिल करके विचार किया गया जिसके दौरान याचिका इस न्यायालय के समक्ष सुनवाई के लिए लंबित रही थी। रिट याचिका का निर्णय वर्ष 2000 में किया गया था लेकिन इसे 1992 में दायर किया गया है और 15 वर्ष के विलंब को संदर्भ के साथ विचार में लिया गया है उस तारीख तक जब मामले की सुनवाई और निर्णय किया जा रहा था। जाहिर तौर पर, 8 वर्ष की अवधि जिसके दौरान इस न्यायालय द्वारा याचिका पर सुनवाई नहीं की जा सकी, याचिकाकर्ता-अपीलार्थी के लिए जिम्मेदार, यदि कोई हो, का हिस्सा नहीं हो सकती।"

19. उपरोक्त दो निर्णयों पर अवलंब करते हुए, विद्वान एकल न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित किया कि रिट याचिकाकर्तागण का राहत का दावा करने का अधिकार अभी भी जारी है और केवल लंबी अवधि के लिए रिट याचिका के लंबित होने के कारण, रिट याचिकाकर्तागण को राहत से इनकार नहीं किया जा सकता है। अन्यथा इसका पात्र पाया गया।

20. हमारी सुविचारित राय में, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा लिया गया दृष्टिकोण केवल उस आधार पर बर्खास्तगी की गारंटी नहीं देता है और इसलिए, संबंधित अपीलार्थी-राज्य और आरपीएससी के विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने राहत देने में गलती की है। रिट याचिका के निर्णय में विलंब को नजरअंदाज करते हुए, इसे खारिज कर दिया जाना चाहिए क्योंकि रिट याचिकाकर्तागण को रिट याचिका के निर्णय में विलंब के लिए पीड़ित नहीं बनाया जा सकता क्योंकि इसमें उनकी कोई गलती नहीं है।

21. **<u>पुरुषोत्तम बनाम अध्यक्ष, एमएसईबी और अन्य (सुप्रा.)</u>** के मामले में, उच्चतम न्यायालय में उनके आधिपत्य ने आधिकारिक रूप से कहा है कि यदि रिट

याचिकाकर्तागण अन्यथा नियुक्ति के पात्र पाए जाते हैं और प्रतीक्षा सूची का संचालन नहीं करने पर नियुक्ति प्राधिकारी की कार्रवाई उचित है। अवैध पाए जाने पर, रिट याचिकाकर्तागण को न्यायसंगत राहत से इनकार नहीं किया जा सकता, बशर्ते कि न्यायालय द्वारा पारित आदेश की तारीख पर उनकी रिक्तियां मौजूद हों। इसलिए, विलंब के आधार पर रिट याचिका की विचारणीयता पर मुख्य आपत्तियों में से एक को खारिज किया जा सकता है और तदनुसार खारिज कर दिया जाता है।

22. वर्तमान मामले में विचार करने योग्य मौलिक मुद्दा यह है कि क्या उस तारीख को, जब यहां प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 (रिट याचिका में प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6) को नियुक्ति आदेश जारी किया गया था, अर्थात 22.04.1998, आरक्षित सूची थी जीवित था और संचालन के लिए लागू था और यदि हां, तो क्या आरक्षित सूची का संचालन न करने में राज्य की ओर से निष्क्रियता अवैध और मनमानी थी।

23. होम्योपैथिक चिकित्सकों के संवर्ग में जन्मे पदों पर भर्ती राजस्थान आयुर्वेदिक, यूनानी, होम्योपैथी और प्राकृतिक चिकित्सा सेवा नियम, 1973 नामक नियमों द्वारा शासित होती है। भाग (IV) में सीधी भर्ती के लिए प्रक्रिया के संबंध में प्रावधान शामिल हैं। महत्वपूर्ण बात यह है कि नियम 20 में आरपीएससी की सिफारिश का प्रावधान है, जिसे नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है:-

> "20. **नियुक्ति प्राधिकारी के लिए आयोग की सिफारिश**- आयोग उन अभ्यर्थियों की एक सूची तैयार करेगा जिन्हें वह संबंधित पदों पर नियुक्ति के लिए उपयुक्त मानता है, गुणागुण के क्रम में व्यवस्थित की जाएगी। आयोग सूची नियुक्ति प्राधिकारी को अग्रेषित करेगा। बशर्ते कि आयोग विज्ञापित रिक्तियों में से 50% की सीमा तक उपयुक्त उम्मीदवारों का नाम आरक्षित सूची में रख सकता है। आयोग मांग करने पर, नियुक्ति प्राधिकारी को गुणागुण के क्रम में ऐसे उम्मीदवारों के नामों की सिफारिश उस तारीख से छह माह के भीतर कर सकता है, जिस दिन मूल सूची आयोग द्वारा नियुक्ति प्राधिकारी को भेजी जाती है।
>
> बशर्ते कि आयुर्वेद चिकित्साधिकारी, होम्योपैथी चिकित्साधिकारी, यूनिनी चिकित्साधिकारी के पदों के लिए, नियुक्ति प्राधिकारी उन उम्मीदवारों की एक सूची तैयार करेगा जिन्हें वह संबंधित पदों पर

नियुक्ति के लिए उपयुक्त मानता है, गुणागुण के क्रम में व्यवस्थित की जाएगी। नियुक्ति प्राधिकारी सूची शासन को अग्रसारित करेगा। नियुक्ति प्राधिकारी विज्ञापित रिक्तियों में से 50% तक उपयुक्त उम्मीदवारों का नाम आरक्षित सूची में रख सकता है।

उपरोक्त नियम दो भागों में है, पहले भाग में आयोग द्वारा उम्मीदवारों की एक सूची तैयार करने की परिकल्पना की गई है, जिन्हें गुणागुण के क्रम में व्यवस्थित करके संबंधित पदों पर नियुक्ति के लिए उपयुक्त माना जा सकता है। यह आयोग को नियुक्ति प्राधिकारी को सूची अग्रेषित करने के लिए भी बाध्य करता है।

नियमों के दूसरे भाग में प्रावधान है कि आयोग विज्ञापित रिक्तियों में से 50% की सीमा तक उपयुक्त उम्मीदवारों का नाम आरक्षित सूची में रख सकता है। इसमें आगे यह भी प्रावधान है कि आयोग मांग करने पर, नियुक्ति प्राधिकारी को गुणागुण के क्रम में ऐसे उम्मीदवारों के नामों की सिफारिश उस तारीख से छह माह के भीतर कर सकता है, जिस दिन आयोग द्वारा नियुक्ति प्राधिकारी को मूल सूची भेजी जाती है। यदि नियम के दूसरे भाग को शाब्दिक रूप से पढ़ा जाए, तो यह संकेत दे सकता है कि आरक्षित सूची को मूल सूची की तारीख से छह माह की बाहरी सीमा के भीतर सरकार को मांगने पर आयोग द्वारा अग्रेषित किया जा सकता है।

24. हालाँकि, राजस्थान राज्य के तहत अन्य सेवाओं में लागू समान नियमों और शासकीय भर्ती पर इस न्यायालय के कई निर्णयों पर विचार किया गया है, जिनका उल्लेख हम यहां नीचे करेंगे।

25. **सरिता चौधरी बनाम राजस्थान राज्य और अन्य (सुप्रा.)** के मामले में इस न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश, एक चयनित उम्मीदवार के शामिल न होने के कारण रिक्ति के खिलाफ आरक्षित सूची के संचालन में निष्क्रियता के कारण हुई शिकायत की जांच कर रहे थे। जिन्हें मुख्य चयन सूची में रखा गया था। उपरोक्त मामले में लागू नियम में मुख्य चयन सूची के साथ-साथ आरक्षित सूची की तैयारी और संचालन के संबंध में समान प्रावधान शामिल थे। चयन सूची और आरक्षित सूची की तैयारी और संचालन से संबंधित पैरा मैटेरिया प्रावधानों पर विचार किया गया। विद्वान एकल न्यायाधीश ने **जम्मू-कश्मीर राज्य और अन्य बनाम सतपाल (सुप्रा.) और गुजरात राज्य कार्यकारी अभियंता संघ बनाम गुजरात राज्य और अन्य (सुप्रा.)** उप-मामले में उच्चतम न्यायालय के निर्णयों

का हवाला दिया और इस न्यायालय के दो अन्य निर्णय, **घनश्याम बनाम राजस्थान राज्य और अन्य, 2009 (3) डब्ल्यूएलसी (राज.) 196 और डॉ. राकेश मणि बनाम राजस्थान राज्य, 1990 (2) डब्लूएलएन 414,**, के मामलों पर भरोसा किया गया है। यह माना गया था कि जिन पदों के लिए भर्ती आयोजित की गई है, उनके भरने के बाद ही प्रतीक्षा सूची का संचालन शुरू होगा और नियुक्ति के प्रस्ताव जारी होने पर प्रतीक्षा सूची का संचालन शुरू होगा। जो गुणागुण सूची में शीर्ष पर हैं। आगे यह माना गया कि प्रतीक्षा सूची का अस्तित्व, नियुक्ति प्राधिकारी को प्रतीक्षा सूची के अस्तित्व के दौरान उत्पन्न होने वाली रिक्तियों को भरने के लिए जगह देता है। विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश के विरुद्ध की गई रिट अपील को इस न्यायालय की प्रधान पीठ, जोधपुर की खंडपीठ ने अपने आदेश दिनांक 21.01.2016 द्वारा **खंडपीठ सिविल विशेष अपील (रिट) संख्या 29/2016,** में पुष्टि की थी। **राजस्थान राज्य और अन्य बनाम सरिता चौधरी और अन्य** इस न्यायालय की खंडपीठ ने उस मामले में पैरा मैटेरिया नियम का जिक्र करते हुए कहा कि नियुक्ति के लिए सिफारिश करते समय आयोग को विज्ञापित रिक्तियों के 50% की सीमा तक उपयुक्त उम्मीदवारों की एक आरक्षित सूची तैयार करने की आवश्यकता है और आगे के नाम मांग पर आरक्षित सूची में रखे गए उम्मीदवारों की मूल सूची अग्रेषित करने की तारीख से छह माह के भीतर गुणागुण के क्रम में सरकार को सिफारिश की जाएगी। नियम की योजना का उल्लेख करते हुए, यह नोट किया गया कि चयनित पदधारियों द्वारा सेवा में शामिल होने की अंतिम तिथि 21.03.2014 थी और इसलिए, राज्य सरकार को राजस्थान तकनीकी शिक्षा के नियम 25 के प्रावधान के अनुसार एक मांग करनी चाहिए थी (आरक्षित सूची संचालित करने के लिए उस मामले में इंजीनियरिंग) सेवा नियम, 2010 लागू होते हैं। इस बात की सराहना करने के बाद कि राज्य द्वारा परिपत्र के आधार पर ऐसी कोई मांग नहीं की गई थी और परिपत्र केवल एक प्रशासनिक निर्देश था, जो वैधानिक प्रावधान पर हावी नहीं हो सकता था, यह माना गया कि राज्य को एक मांग करनी चाहिए थी आयोग को आरक्षित सूची में रखे गए व्यक्तियों के नामों की सिफारिश करनी थी और चूंकि विद्वान एकल न्यायाधीश ने उस मामले में लागू नियम में निहित वैधानिक योजना का नोटिस लेते हुए रिट याचिका की अनुमति दी थी, अपील खारिज कर दी गई थी।

26. **अलका अग्रवाल बनाम राजस्थान राज्य और अन्य (सुप्रा.)** के मामले में एक और निर्णय में, इस न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश ने **जम्मू और कश्मीर राज्य**

<u>और अन्य बनाम सतपाल</u> और कई अन्य निर्णय में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर अवलंब किया।

तथ्यों के अनुसार यह एक ऐसा मामला था जहां 26 चयनित उम्मीदवारों में से, जिन्हें नियुक्ति की पेशकश की गई थी, 8 उम्मीदवार सेवा में शामिल नहीं हुए और हालांकि, राज्य ने आरपीएससी को आरक्षित/प्रतीक्षा सूची से चयनित उम्मीदवारों के नाम अग्रेषित करने की मांग की थी, लेकिन आयोग ने ऐसा करने से इनकार कर दिया। आरक्षित सूची से नाम इस आधार पर आगे बढ़ाएं कि आरक्षित सूची की छह माह की वैधता की अवधि पहले ही समाप्त हो चुकी है।

जाहिर है, उस मामले में भी, आरक्षित सूची के संचालन को नियंत्रित करने वाले नियम पैरा मैटेरिया थे।

राज्य ने खंडपीठ के समक्ष अपील की, हालांकि असफल रहा। दिनांक 02.11.2017 के आदेश के तहत, **<u>राजस्थान लोक सेवा आयोग, अजमेर बनाम अलका अग्रवाल और अन्य (सुप्रा.)</u>** के मामले में विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश के खिलाफ राज्य की अपील खारिज कर दी गई। खंडपीठ ने निम्नानुसार कहा: -

> "4. विद्वान एकल न्यायाधीश ने इस विषय पर विभिन्न निर्णयों को नोट किया है और विशेष रूप से उच्चतम न्यायालय का एक निर्णय *जम्मू और कश्मीर राज्य और अन्य बनाम सत पाल* (2013) 11 एससीसी 737 के रूप में प्रकाशित किया गया। उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट रूप से कहा कि जिन रिक्तियों के लिए भर्ती प्रक्रिया आयोजित की गई है, उन्हें नहीं भरने के बाद प्रतीक्षा सूची का संचालन शुरू होता है। उच्चतम न्यायालय ने कहा कि त्रिलोक नाथ नामक व्यक्ति, जिसे 22.04.2008 को नियुक्ति की पेशकश की गई थी, उसने ज्वाइन नहीं किया। उच्चतम न्यायालय ने माना कि प्रतीक्षा सूची की अवधि की वैधता 22.04.2008 से शुरू होगी।

27. यहां यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि **<u>राजस्थान राज्य और अन्य बनाम सरिता चौधरी और अन्य (सुप्रा.)</u>** के मामले में प्रधान पीठ, जोधपुर में इस न्यायालय की खंडपीठ के निर्णय के खिलाफ राज्य की अपील को माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया था। न्यायालय ने 04.07.2016 को इस प्रकार निर्णय दिया:-

"हमें आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं दिखता।

विशेष अनुमति याचिका खारिज की जाती है।"

28. **जम्मू और कश्मीर राज्य और अन्य बनाम सत पाल (सुप्रा.)** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय और **राजस्थान राज्य और अन्य बनाम सरिता चौधरी और अन्य (सुप्रा.)** के मामलों में इस न्यायालय की खंडपीठ के निर्णय पर अवलंब करते हुए एवं राजस्थान लोक सेवा आयोग, **अजमेर बनाम अलका अग्रवाल और अन्य (सुप्रा.), घनश्याम खटीक बनाम राजस्थान राज्य और अन्य(सुप्रा.)** तथा अन्य संबंधित याचिकाओं के बैच के मामले में इस न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश के एक अन्य निर्णय ने, इस संबंध में विधिक स्थिति को दोहराया। इस मुद्दे पर चयन सूची का संचालन कि भर्ती प्रक्रिया में आरक्षित सूची के छह माह के जीवन की गणना के लिए महत्वपूर्ण तारीख क्या है। सूची को संचालित करने के निर्देश के साथ रिट याचिकाओं को अनुमति दी गई थी।

विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश को राज्य द्वारा रिट अपील में फिर से खारिज कर दिया गया, हालांकि असफल रहा। अपने आदेश दिनांक 23.01.2019 के माध्यम से, खंडपीठ ने **सरिता चौधरी बनाम राजस्थान राज्य और अन्य (सुप्रा.)** के मामले में इस न्यायालय की एकलपीठ द्वारा पहले अपनाए गए दृष्टिकोण को फिर से दोहराया और अपीलों का निपटारा किया गया। विद्वान एकल न्यायाधीश **कौशल कुमार गुप्ता बनाम राजस्थान राज्य और अन्य (सुप्रा.)** के मामले में इस न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने इस तथ्य की खोज दर्ज की है कि रिक्ति उपलब्ध थी, **जम्मू और कश्मीर राज्य और अन्य बनाम सत पाल (सुप्रा.)** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय और प्रधान पीठ, जोधपुर में इस न्यायालय की एकलपीठ के **सरिता चौधरी बनाम राजस्थान राज्य और अन्य (सुप्रा.)** में निर्णय पर अवलंब करते हुए याचिका को अनुमति दी गई। के मामले में। हालाँकि, आरपीएससी ने उक्त आदेश के खिलाफ अपील दायर की, लेकिन खंडपीठ ने उसका निपटारा कर दिया।

29. **रवींद्र पुरोहित और अन्य बनाम राजस्थान राज्य और अन्य (सुप्रा.)** के मामले में इस न्यायालय के एक और निर्णय में, **जम्मू और कश्मीर राज्य और अन्य बनाम सत पाल (सुप्रा.)** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर अवलंब करते हुए और आरक्षित सूची की तैयारी और संचालन के लिए प्रदान करने वाले पैरा मैटेरिया नियम से

निपटते हुए, रिट याचिकाकर्तागण के पक्ष में कहा गया कि राज्य ने आरक्षित सूची का संचालन नहीं करने में अवैध और मनमाने ढंग से काम किया, भले ही चयनित उम्मीदवार इसमें शामिल नहीं हुए। ऐसे गैर-ज्वाइनिंग के कारण, प्रतीक्षा सूची को संचालित करने का अवसर आया, जो चयनित उम्मीदवारों के शामिल न होने के कारण लागू और वैध थी।

30. इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों के सर्वेक्षण से, यह स्पष्ट रूप से स्पष्ट है कि **जम्मू और कश्मीर राज्य और अन्य बनाम सत पाल (सुप्रा.)** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर अवलंब करते हुए, लगातार दृष्टिकोण लिया गया है। **राजस्थान राज्य और अन्य बनाम सरिता चौधरी और अन्य (सुप्रा.)**, **राजस्थान लोक सेवा आयोग, अजमेर बनाम अलका अग्रवाल और अन्य (सुप्रा.) और राजस्थान राज्य और अन्य बनाम घनश्याम खटीक और अन्य (सुप्रा.),** के मामलों में इस न्यायालय की समन्वय खंडपीठ आरक्षित सूची की तैयारी और संचालन से संबंधित पैरा मैटेरिया प्रावधान की व्याख्या करते हुए कहा कि आरक्षित सूची तब संचालित होगी जब मुख्य सूची में चयनित उम्मीदवार हालांकि, नियुक्ति की पेशकश की गई है, आरक्षित सूची और रिक्ति के दौरान शामिल नहीं होंगे।

31. हालांकि, राज्य और आरपीएससी के विद्वान अधिवक्ताओं ने रिट याचिकाकर्तागण के दावे का विरोध करने के लिए विभिन्न निर्णयों पर अवलंब किया। **श्री संजय भट्टाचार्जी बनाम भारत संघ और अन्य (सुप्रा.)** के मामले में, तथ्यों पर, यह पाया गया कि याचिकाकर्ता ने इस आधार पर नियुक्ति के लिए राहत मांगी थी कि उसका नाम चयन सूची में शामिल था, गुणागुण के आधार पर उसकी रैंकिंग 779 थी जबकि, केवल 480 रिक्तियां अधिसूचित की गईं। जब सरकार नई भर्ती के लिए अधिसूचना जारी करने के लिए आगे बढ़ी, तो पहले तैयार की गई गुणागुण सूची को संचालित करने का निर्देश देने की मांग करते हुए रिट याचिका दायर की गई। जाहिर है उस मामले में, याचिकाकर्ता को गुणागुण सूची में क्रम संख्या 779 पर रखा गया था, जबकि केवल 480 रिक्तियां अधिसूचित की गई थीं, जिन्हें भर दिया गया था और फिर विज्ञापन जारी करके भर्ती की नई प्रक्रिया शुरू की गई थी। उस संदर्भ में, ट्रिब्यूनल के उस याचिका को खारिज करने का आदेश जिसमें कहा गया था कि किसी उम्मीदवार को केवल चयन सूची में रखने से उसे नियुक्ति का कोई अधिकार नहीं मिल जाता है, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा बरकरार रखा गया था। इसमें स्पष्ट रूप से देखा गया कि चयन केवल 480 रिक्तियों को भरने के

लिए किया गया था और उसके समाप्त होने के बाद की रिक्तियों के लिए खुले बाजार से चयन किया जाना है और इसलिए, पहले की चयन सूची को संचालित करने के लिए कोई निर्देश नहीं दिया जा सकता है और केवल क्योंकि उसमें याचिकाकर्ता को प्रतीक्षा सूची में रखा गया था, इसलिए उसे नियुक्ति का कोई निहित अधिकार नहीं मिलता है।

32. **राज ऋषि मेहरा और अन्य बनाम पंजाब राज्य और अन्य (सुप्रा.)** के मामले में, याचिकाकर्तागण ने जिस तथ्यात्मक पृष्ठभूमि में नियुक्ति का दावा किया था, वह यह थी कि याचिकाकर्तागण ने चयन सूची में अपना नाम शामिल करने के आधार पर नियुक्ति का दावा किया था। वे पद जो दो नियुक्तियों के त्यागपत्र और आरक्षित श्रेणियों के रिक्त पदों के कारण उपलब्ध हुए। उस मामले के विशिष्ट तथ्य यह थे कि याचिकाकर्ता, जो सामान्य श्रेणी के थे, ने सामान्य श्रेणी के पदों पर भर्ती के लिए आवेदन किया था। आयोग द्वारा तैयार की गई चयन सूची में, उन याचिकाकर्तागण के नाम क्रम संख्या 49, 50, 51, 53 और 54 पर दिखाए गए थे। हालांकि, उनके नाम चयनित उम्मीदवारों की नियुक्ति के लिए बने रजिस्टर में शामिल नहीं किए गए थे क्योंकि 47 उनसे ऊपर रखे गए अभ्यर्थियों को सामान्य वर्ग के विज्ञापित पदों पर नियुक्त किया गया। आरक्षित श्रेणियों से केवल 27 उम्मीदवारों का चयन किया गया और उन्हें उनकी संबंधित श्रेणियों के लिए निर्धारित पदों के विरुद्ध नियुक्त किया गया। दो अभ्यर्थियों में से क्रमांक 31 पर और अन्य क्रमांक 48 पर थे, सामान्य श्रेणी के पद पर क्रमांक 31 पर एक अभ्यर्थी शामिल नहीं हुआ और उसके स्थान पर एक अन्य अभ्यर्थी, जो क्रमांक 48 पर था को नियुक्त किया गया था, एक अन्य उम्मीदवार क्रमांक 32 पर था, जिसे सामान्य श्रेणी के पद पर नियुक्त किया गया था, वह सेवा में शामिल हुआ लेकिन उसने इस्तीफा दे दिया। उनके द्वारा रिक्त पदों को नहीं भरा गया और उन्हें जारी विज्ञापन में शामिल कर लिया गया।

इस बीच, याचिकाकर्तागण ने अपनी नियुक्ति की सुविधा के लिए आरक्षित श्रेणी के पदों को अनारक्षित करने के लिए सरकार को अभ्यावेदन प्रस्तुत किया, जिसे स्वीकार कर लिया गया और 5 पदों को अनारक्षित करने का आदेश जारी किया गया। रिक्त पदों पर उन याचिकाकर्तागण की नियुक्ति के लिए उच्च न्यायालय को पत्र भेजा गया, लेकिन उच्च न्यायालय सहमत नहीं हुआ।

इस समय, रिक्तियों के विरुद्ध नियुक्ति के लिए उच्च न्यायालय को परमादेश जारी करने के लिए न्यायिक हस्तक्षेप की मांग की गई थी। हालाँकि, राज्य सरकार के अनुरोध

को उच्च न्यायालय ने अस्वीकार कर दिया था कि पद विज्ञापित किए गए हैं।

इस पृष्ठभूमि में, नियुक्ति के अपरिहार्य अधिकार के याचिकाकर्तागण के दावे को माननीय उच्चतम न्यायालय ने सुस्थापित सिद्धांतों को लागू करते हुए खारिज कर दिया था कि केवल प्रतीक्षा सूची में शामिल होने से कोई अधिकार नहीं मिलता है और प्रतीक्षा सूची एक परीक्षा में तैयार की जाती है। आयोग द्वारा आयोजित भर्ती का कोई बारहमासी स्रोत प्रस्तुत नहीं करता है और इसके अलावा यह केवल आकस्मिकता के लिए संचालित होता है कि यदि चयनित उम्मीदवारों में से कोई भी शामिल नहीं होता है तो प्रतीक्षा सूची से व्यक्ति को ऊपर धकेल दिया जा सकता है और रिक्ति में नियुक्त किया जा सकता है। कारण होने पर या यदि कोई अत्यधिक अत्यावश्यकता हो, तो सरकार, नीतिगत निर्णय के रूप में, प्रतीक्षा सूची से गुणागुण के क्रम में व्यक्तियों को चुन सकती है। एक व्यापक विधिक प्रस्ताव कि एक परीक्षा में प्रतीक्षा सूची भविष्य में नियुक्तियों के लिए अनंत स्टॉक के रूप में काम नहीं करेगी, एक स्थापित विधिक स्थिति के रूप में प्रस्तावित किया गया था कि रिक्तियों को विज्ञापित रिक्तियों की संख्या से अधिक नहीं भरा जा सकता है।

इसलिए, उपरोक्त निर्णय प्रत्यर्थीगण की सहायता के लिए नहीं आता है।

33. **<u>गुजरात राज्य उप-कार्यकारी अभियंता संघ बनाम गुजरात राज्य और अन्य (सुप्रा.)</u>** के मामले में, प्रतीक्षा सूची की वैधता, संचालन और समाप्ति के मामले में लागू सिद्धांत माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा इस तथ्यात्मक आधार पर विचार के लिए आए कि मुख्य चयन सूची के तहत एक उम्मीदवार द्वारा दायर याचिका में न्यायालय के आदेश के अनुपालन में संशोधन, जिसका सूची में शामिल न होने का दावा अवैध ठहराया गया था। मुख्य सूची में संशोधन के परिणामस्वरूप, बाहर किए गए अभ्यर्थी को शामिल किया गया और अंततः न्यायालय के आदेश के तहत नियुक्त किया गया। प्रतीक्षा सूची का परिणामी संशोधन भी हुआ। उस स्तर पर, जो लोग प्रतीक्षा सूची में शामिल थे, उन्होंने दावा करना शुरू कर दिया कि उपलब्ध रिक्तियों पर नियुक्ति के लिए उनके नाम पर भी विचार किया जाना चाहिए। माननीय उच्चतम न्यायालय ने प्रतीक्षा सूची की वैधता, संचालन और समाप्ति के साथ-साथ मुख्य चयन सूची में नहीं, बल्कि प्रतीक्षा सूची में रखे गए चयनित उम्मीदवार के सीमित अधिकार के संबंध में व्यापक प्रस्ताव रखा:-

> 8. अगले मुद्दे पर आते हैं, पहला प्रश्न यह है कि प्रतीक्षा सूची क्या है?;
>
> क्या इसे भर्ती के स्रोत के रूप में माना जा सकता है जहां से

आवश्यकता पड़ने पर उम्मीदवारों को लियाजा सकता है?; और अंततः यह कितने समय तक चल सकता है? ये कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न हैं जो उच्च न्यायालय द्वारा जारी निर्देश के परिणामस्वरूप उठते हैं। सक्षम प्राधिकारी द्वारा सेवा मामलों में तैयार की गई प्रतीक्षा सूची पात्र और योग्य उम्मीदवारों की एक सूची है, जिन्हें गुणागुण के क्रम में अंतिम चयनित उम्मीदवार से नीचे रखा जाता है। इसे कैसे संचालित करना चाहिए और इसकी प्रकृति क्या है, यह नियमों द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है। आमतौर पर यह उस चयन या परीक्षा से जुड़ा होता है जिसके लिए इसे तैयार किया जाता है। उदाहरण के लिए, यदि 1990 के लिए 10 उम्मीदवारों के चयन के लिए एक परीक्षा आयोजित की जाती है और सक्षम प्राधिकारी प्रतीक्षा सूची तैयार करता है तो यह केवल उन दस सीटों के संबंध में है जिनके लिए चयन या प्रतियोगिता आयोजित की गई थी। इसका कारण यह है कि जब भी चयन किया जाता है, सिवाय जहां यह एकल पद के लिए होता है, तो आम तौर पर न केवल विज्ञापन जारी होने या आवेदन आमंत्रित होने की तिथि पर मौजूद रिक्तियों की संख्या को ध्यान में रखा जाता है, बल्कि उन रिक्तियों को भी ध्यान में रखा जाता है जो संभावित हैं। भविष्य में सेवानिवृत्ति आदि के कारण एक वर्ष या उसके आसपास उत्पन्न होना। ऐसा अधिक होता है जहां आयोग द्वारा नियमित रूप से चयन किया जाता है। ऐसी सूचियाँ या तो नियमों के तहत या अन्यथा मुख्य रूप से यह सुनिश्चित करने के लिए तैयार की जाती हैं कि यदि चयनित उम्मीदवार एक या दूसरे कारण से शामिल नहीं होते हैं या अगला चयन या परीक्षा जल्द ही आयोजित नहीं होती है तो कार्यालय में काम प्रभावित नहीं होता है। गुणागुण क्रम में प्रतीक्षा सूची में शामिल उम्मीदवार को यह दावा करने का अधिकार है कि यदि एक या अन्य चयनित उम्मीदवार शामिल नहीं होता है तो उसे नियुक्त किया जा सकता है। लेकिन एक बार जब चयनित उम्मीदवार शामिल हो जाते हैं और इस्तीफा आदि या किसी अन्य कारण से उस अवधि के भीतर कोई रिक्ति नहीं निकलती है, तो सूची को नियमों के तहत या उचित अवधि के

भीतर संचालित करना है, जहां कोई विशिष्ट अवधि प्रदान नहीं की जाती है, तो प्रतीक्षा सूची के उम्मीदवार को कोई अधिकार नहीं है। भविष्य में उत्पन्न होने वाली किसी भी रिक्ति पर नियुक्ति का दावा करने के लिए जब तक कि उसके लिए चयन न किया गया हो। ऊपर बताई गई सीमित सीमा को छोड़कर, या जब नियुक्ति प्राधिकारी मनमाने ढंग से कार्य करता है और बाहरी कारणों से प्रतीक्षा सूची से चयन करके नियुक्ति करता है, उसके अलावा उसके पास कोई निहित अधिकार नहीं है।

9. आयोग द्वारा आयोजित परीक्षा में तैयार की गई प्रतीक्षा सूची भर्ती का स्रोत प्रस्तुत नहीं करती है। यह केवल आकस्मिकता के लिए लागू है कि यदि चयनित उम्मीदवारों में से कोई भी शामिल नहीं होता है तो प्रतीक्षा सूची के व्यक्ति को आगे बढ़ाया जा सकता है और रिक्त स्थान पर नियुक्त किया जा सकता है या यदि कोई अत्यधिक अत्यावश्यकता है तो सरकार ऐसा कर सकती है। नीतिगत निर्णय प्रतीक्षा सूची से गुणागुण के क्रम में व्यक्तियों को चुनें। लेकिन उच्च न्यायालय द्वारा लिया गया यह विचार कि चूंकि रिक्तियों पर ठीक से काम नहीं किया गया है, इसलिए, प्रतीक्षा सूची के उम्मीदवारों को नियुक्त किया जाना उचित प्रतीत नहीं होता है। इस प्रथा के परिणामस्वरूप वे उम्मीदवार वंचित हो सकते हैं जो भविष्य में उपलब्ध रिक्तियों के लिए प्रतिस्पर्धा के लिए पात्र हो जाते हैं। यदि एक परीक्षा में प्रतीक्षा सूची, नियुक्तियों के लिए अनंत भंडार के रूप में काम करेगी, तो यह खतरा है कि राज्य सरकार वर्षों तक परीक्षा आयोजित न करने की युक्ति का सहारा ले सकती है और जब भी और जब भी प्रतीक्षा सूची से आवश्यक उम्मीदवारों को ले सकती है। संवैधानिक अनुशासन के लिए यह आवश्यक है कि इस न्यायालय को शक्ति के ऐसे अनुचित प्रयोग की अनुमति नहीं देनी चाहिए, जिसके परिणामस्वरूप निहित स्वार्थ पैदा हो सकता है और खुले या सेवा से भी नए उम्मीदवारों के पूरे सेट की कीमत पर एक परीक्षा के उम्मीदवारों के लिए प्रतीक्षा सूची बनाई जा सकती है। ।"

34. यह स्पष्ट है कि विधिक स्थिति का परीक्षण करते समय यह स्पष्ट रूप से देखा

गया कि यदि चयनित अभ्यर्थी किसी न किसी कारण से कार्यभार ग्रहण नहीं करते अथवा अगला चयन अथवा परीक्षा शीघ्र आयोजित नहीं होती तो क्रम में प्रतीक्षा सूची में अभ्यर्थी गुणागुणधारी को यह दावा करने का अधिकार है कि यदि एक या अन्य चयनित उम्मीदवार शामिल नहीं होता है और नियमों की योजना के तहत प्रतीक्षा सूची चालू रहती है तो उसे नियुक्त किया जा सकता है। इसलिए, आकस्मिक स्थिति में एक उम्मीदवार के सीमित अधिकार को मान्यता दी गई थी जब विज्ञापित रिक्तियों के खिलाफ, मुख्य गुणागुण सूची में रखे गए उम्मीदवारों को, हालांकि नियुक्ति की पेशकश की गई थी, लेकिन शामिल नहीं हुए थे।

35. म.प्र. के मामले में. विद्युत मंडल मुख्य अभियंता, **म.प्र. ईबी और अन्य बनाम वीरेंद्र कुमार शर्मा (सुप्रा.)** ने भी, नियुक्ति की योजना के आलोक में प्रतीक्षा सूची के संचालन के संबंध में व्यापक सिद्धांतों पर विचार किया गया था कि उस मामले में लागू योजना के अनुसार पैनल को वैध/चालू रहना था एक विशेष अवधि और उस अवधि के बाद, सूची समाप्त हो जाएगी और नया पैनल तैयार करना होगा। तथ्यों के आधार पर, ऐसा नहीं था कि दावा इस आधार पर किया गया था कि भले ही प्रतीक्षा सूची वैध और सक्रिय रही और गुणागुण सूची में शामिल उम्मीदवार शामिल नहीं हुए, प्रतीक्षा सूची के उम्मीदवार को नियुक्ति का दावा करने का कोई अधिकार नहीं था।

36. **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य बनाम हरीश चंद्र और अन्य (सुप्रा.)** के मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने माना कि संविधान के तहत, न्यायालय द्वारा एक परमादेश जारी किया जा सकता है जब याचिकाकर्ता यह स्थापित करता है कि उसके पास विधिक अधिकार है। उस पक्ष द्वारा विधिक कर्तव्य के पालन का अधिकार जिसके विरुद्ध परमादेश मांगा गया है और उक्त अधिकार याचिका की तिथि पर विद्यमान था। यह अभिनिर्धारित किया है कि सरकार को कानून के प्रावधानों को लागू करने से परहेज करने या कानून के विपरीत कुछ करने का निर्देश देने के लिए कोई परमादेश जारी नहीं किया जा सकता है। तथ्यों पर, यह पाया गया कि उन प्रत्यर्थीगण को भर्ती करने का निर्देश, जो चयन सूची में शामिल थे, जो अब याचिका दायर होने के समय जीवित नहीं थे, कोई निर्देश जारी नहीं किया जा सका क्योंकि जिस दिन याचिकाकर्ता ने उच्च न्यायालय से संपर्क किया था, उस दिन अस्तित्व में रहने का कोई अधिकार नहीं था।

फिर से परमादेश मांगने के पक्ष के अधिकार के मुद्दे पर, उस मामले के विशिष्ट

तथ्यों पर निर्भर करते हुए कि जिस दिन याचिका दायर की गई थी, चयनित दंड की समाप्ति के कारण कोई अस्तित्व अधिकार नहीं था, राहत से इनकार कर दिया गया था।

37. **<u>बिहार राज्य और अन्य बनाम मोहम्मद कलीमुद्दीन और अन्य (सुप्रा.)</u>** के मामले में, तथ्य यह थे कि भले ही सूची सक्रिय थी, राज्य द्वारा सूची को संचालित न करने का निर्णय लिया गया था और यह माना गया था कि ऐसा निर्णय को मनमाना, तर्कहीन या दुर्भावनापूर्ण कहकर निंदा नहीं की जा सकती। शासन के निर्णय को बरकरार रखते हुए केवल चयन सूची में शामिल होने के आधार पर दावा खारिज कर दिया गया।

<u>महाराष्ट्र लोक सेवा आयोग बनाम पंकज कुमार सी. दाभीरे और अन्य (सुप्रा.)</u> के मामले में बॉम्बे उच्च न्यायालय ने भी यही विचार अपनाया है, जिस पर प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने अवलंब जताया है।

38. **<u>पूनम बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य, (2016) 2 उच्चतम न्यायालय केस 779, के मामले में</u>** अनुपात निर्णय के सिद्धांत को माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा इस प्रकार समझाया गया था: -

> "39. इस संबंध में, हम *क्विन बनाम लीथेम,* 1901 एसी 495 में लॉर्ड हैल्सबरी द्वारा बताए गए नियम का उल्लेख कर सकते हैं:
>
> > "... प्रत्येक निर्णय को सिद्ध या सिद्ध माने गए विशेष तथ्यों पर लागू होने के रूप में पढ़ा जाना चाहिए, क्योंकि वहां पाई जाने वाली अभिव्यक्तियों की व्यापकता पूरे कानून की व्याख्या करने के लिए नहीं होती है, बल्कि विशेष द्वारा शासित और योग्य होती है मामले के तथ्य जिनमें ऐसी अभिव्यक्तियाँ पाई जानी हैं।
>
> 40. *भारत संघ और अन्य बनाम धनवंती देवी, (1996) 6 एससीसी 44* में तीन न्यायमूर्तियों की पीठ ने संविधान के अनुच्छेद 141 के तहत दृष्टान्त के बारे में चर्चा करते हुए कहा कि:-(एससीसी पी.पी. 51-52, पैरा 9- 10)
>
> > "9. विज्ञापन देने और इस पर विचार करने से पहले कि क्या अधिनियम के तहत क्षतिपूर्ति और ब्याज देय होगा, शुरुआत में, हम श्री वैद्यनाथन द्वारा उठाई गई आपत्ति का निपटान

करेंगे कि भारत संघ बनाम हरि कृष्ण खोसला, 1993 के मामले में। (2) एससीसी 149 एक बाध्यकारी दृष्टान्त नहीं है और न ही यह एक दृष्टान्त के रूप में पालन किए जाने वाले अनुपात निर्णय के रूप में कार्य करता है और प्रति इंक्यूरियम है। निर्णय देते समय न्यायमूर्ति द्वारा कही गई हर बात एक दृष्टान्त नहीं बनती। किसी न्यायमूर्ति के निर्णय में किसी पक्ष को बाध्य करने वाली एकमात्र चीज वह सिद्धांत है जिस पर मामले का निर्णय किया जाता है और इस कारण से किसी निर्णय का विश्लेषण करना और उससे अनुपात निर्णय को अलग करना महत्वपूर्ण है। उदाहरणों के सुस्थापित सिद्धांत के अनुसार, प्रत्येक निर्णय में तीन मूल अभिधारणाएँ होती हैं- (i) भौतिक तथ्यों के निष्कर्ष, प्रत्यक्ष और अनुमानात्मक। तथ्यों का अनुमानात्मक निष्कर्ष वह निष्कर्ष है जो न्यायमूर्ति प्रत्यक्ष, या बोधगम्य तथ्यों से निकालता है; (ii) तथ्यों द्वारा प्रकट की गई विधिक समस्याओं पर लागू कानून के सिद्धांतों का विवरण; और (iii) उपरोक्त के संयुक्त प्रभाव के आधार पर निर्णय। एक निर्णय केवल उसके लिए एक प्राधिकार है जो वह वास्तव में निर्णय लेता है। किसी निर्णय में जो सार है वह उसका अनुपात है और न ही उसमें पाया गया प्रत्येक अवलोकन और न ही निर्णय में की गई विभिन्न टिप्पणियों से तार्किक रूप से क्या अनुसरण होता है। प्रत्येक निर्णय को सिद्ध किए गए विशेष तथ्यों पर लागू होने के रूप में पढ़ा जाना चाहिए, या सिद्ध माना जाना चाहिए, क्योंकि वहां पाए जाने वाले अभिव्यक्तियों की व्यापकता का उद्देश्य पूरे कानून की व्याख्या करना नहीं है, बल्कि विशेष तथ्यों द्वारा शासित और योग्य है। वह मामला जिसमें ऐसी अभिव्यक्तियाँ पाई जानी हैं। इसलिए, निर्णय से यहां-वहां एक वाक्य निकालना और उस पर आगे बढ़ना

लाभदायक नहीं होगा क्योंकि निर्णय का सार उसका अनुपात है न कि उसमें पाया गया प्रत्येक अवलोकन। कारण या सिद्धांत का प्रतिपादन, जिस पर न्यायालय के समक्ष किसी प्रश्न का निर्णय लिया गया है, एक दृष्टान्त के रूप में बाध्यकारी है। अकेले ठोस निर्णय पक्षों के बीच बाध्यकारी होता है, लेकिन यह निर्णय के विषय-वस्तु के संबंध में निर्णय के विचार पर तय किया गया अमूर्त अनुपात निर्णय होता है, जिसमें अकेले कानून का बल होता है और जो, जब यह होता है यह स्पष्ट है कि यह क्या था, बाध्यकारी है। यह केवल निर्णय में निर्धारित सिद्धांत है जो संविधान के अनुच्छेद 141 के तहत बाध्यकारी कानून है। किसी मामले में उठने वाले या विवाद में डाले गए किसी प्रश्न पर बहस सुनने के बाद आया एक जानबूझकर किया गया न्यायिक निर्णय एक दृष्टान्त बन सकता है, चाहे किसी भी कारण से, और लंबी मान्यता से दृष्टान्त वाले निर्णय के नियम में परिपक्व हो सकती है। यह मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर कानून के लागू होने से कटौती योग्य नियम है जो इसके अनुपात निर्णय का गठन करता है।

10. इसलिए, किसी निर्णय की बाध्यकारी शक्ति को समझने और उसकी सराहना करने के लिए यह देखना हमेशा आवश्यक होता है कि जिस मामले में निर्णय दिया गया था उसमें क्या तथ्य थे और वह कौन सा बिंदु था जिस पर निर्णय लिया जाना था। किसी भी निर्णय को ऐसे नहीं पढ़ा जा सकता जैसे कि वह कोई क़ानून हो। निर्णय में एक शब्द या एक खंड या एक वाक्य को कानून की पूर्ण व्याख्या नहीं माना जा सकता है। कानून स्थिर नहीं रह सकता है और इसलिए, न्यायमूर्तियों को उदाहरणों के उपयोग में एक बुद्धिमान तकनीक का उपयोग करना होगा।

उत्तराँचल सडक परिवहन निगम एवं अन्य बनाम मंसाराम नैनवाल, (2006) 6 उच्चतम न्यायालय केस 366 के मामले में एक अन्य निर्णय में भी, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा इसे निम्नानुसार माना गया था:

> "13. उच्च न्यायालय ने दुर्भाग्य से तथ्यात्मक पहलुओं पर चर्चा नहीं की और केवल न्यायालय के पहले के निर्णय पर अवलंब करते हुए माना कि बहाली अनिवार्य थी। मामले की तथ्यात्मक पृष्ठभूमि को देखे बिना निर्णय पर अवलंब करना स्पष्ट रूप से अस्वीकार्य है। कोई भी निर्णय अपने तथ्यों के आधार पर एक दृष्टान्त होता है। प्रत्येक मामला अपनी विशेषताएं प्रस्तुत करता है। निर्णय देते समय न्यायमूर्ति द्वारा कही गई हर बात एक दृष्टान्त नहीं बनती। किसी न्यायमूर्ति के निर्णय में किसी पक्ष को बाध्य करने वाली एकमात्र चीज वह सिद्धांत है जिस पर मामले का निर्णय किया जाता है और इस कारण से किसी निर्णय का विश्लेषण करना और उससे अनुपात निर्णय को अलग करना महत्वपूर्ण है। उदाहरणों के सुस्थापित सिद्धांत के अनुसार, प्रत्येक निर्णय में तीन मूल अभिधारणाएं होती हैं: (i) भौतिक तथ्यों के निष्कर्ष, प्रत्यक्ष और अनुमानात्मक। तथ्यों का अनुमानात्मक निष्कर्ष वह निष्कर्ष है जो न्यायमूर्ति प्रत्यक्ष, या बोधगम्य तथ्यों से निकालता है; (ii) तथ्यों द्वारा प्रकट की गई विधिक समस्याओं पर लागू कानून के सिद्धांतों का विवरण; और (iii) उपरोक्त के संयुक्त प्रभाव के आधार पर निर्णय। एक निर्णय इस बात का प्राधिकार है कि वह वास्तव में क्या निर्णय लेता है। किसी निर्णय में जो सार है वह उसका अनुपात है और न ही उसमें पाया गया प्रत्येक अवलोकन और न ही निर्णय में की गई विभिन्न टिप्पणियों से तार्किक रूप से क्या निकलता है। कारण या सिद्धांत का प्रतिपादन, जिस पर न्यायालय के समक्ष किसी प्रश्न का निर्णय लिया गया है, एक दृष्टान्त के रूप में बाध्यकारी है। (देखें: उड़ीसा राज्य बनाम सुधांशु शेखर मिश्रा, एआईआर 1968 एससी 647 और भारत संघ बनाम धनवंती देवी, (1996) 6 एससीसी 44)। एक मामला एक दृष्टान्त है और जो स्पष्ट रूप से निर्णय लेता है उसके लिए बाध्यकारी है, इससे अधिक नहीं।

न्यायमूर्तियों द्वारा अपने निर्णयों में प्रयुक्त शब्दों को ऐसे नहीं पढ़ा जाना चाहिए जैसे कि वे संसद के किसी अधिनियम के शब्द हों। *क्विन बनाम लीथेम* 1901 एसी 495 में, अर्ल ऑफ हैल्सबरी, एल.सी. यह देखा गया कि प्रत्येक निर्णय को सिद्ध या सिद्ध माने गए विशेष तथ्यों पर लागू होने के रूप में पढ़ा जाना चाहिए, क्योंकि वहां पाए जाने वाले अभिव्यक्तियों की व्यापकता का उद्देश्य पूरे कानून की व्याख्या करना नहीं है, बल्कि विशेष तथ्यों द्वारा शासित और योग्य है। जिस मामले में ऐसी अभिव्यक्तियाँ पाई जाती हैं और एक मामला केवल वही प्राधिकारी होता है जो वह वास्तव में तय करता है।"

<u>डॉ. एन. कार्तिकेयन और अन्य बनाम तमिलनाडु राज्य और अन्य, एआईआर 2022 एससी 1543</u> के मामले में हाल के एक निर्णय में, अनुपात निर्णय के संबंध में पहले निर्धारित सिद्धांतों और समय-समय पर संक्षेप में बताए गए सिद्धांतों को संक्षेप में इस प्रकार प्रस्तुत किया गया था:-

"30. अनुपात निर्णय क्या है, इस न्यायालय द्वारा क्षेत्रीय प्रबंधक और अन्य बनाम पवन कुमार दुबे, (1976) 3 एससीसी 334 के मामले में संक्षेप में समझाया गया है:

"7.....वास्तव में, हमें नहीं लगता कि इतनी बार घोषित और लागू किए गए कानून के सिद्धांत वास्तव में बदल गए हैं। लेकिन, इस न्यायालय में आए विभिन्न मामलों की अलग-अलग परिस्थितियों और तथ्यों पर एक ही कानून लागू करने से कभी-कभी यह धारणा बन सकती है कि इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों के बीच कुछ विरोधाभास है। यहां तक कि जहां कुछ संघर्ष प्रतीत होता है, हम सोचते हैं कि यह तब गायब हो जाएगा जब प्रत्येक मामले के अनुपात निर्णय को सही ढंग से समझा जाएगा। यह किसी मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर कानून के अनुप्रयोग से निकाला जाने वाला नियम है जो उसके अनुपात निर्णय का गठन करता है, न कि तथ्यों पर आधारित कुछ निष्कर्ष जो समान प्रतीत हो सकते हैं। एक अतिरिक्त या अलग तथ्य दो

मामलों में निष्कर्षों के बीच जमीन-आसमान का अंतर पैदा कर सकता है, भले ही प्रत्येक मामले में समान सिद्धांतों को समान तथ्यों पर लागू किया जाए।''

31. भारत संघ और अन्य बनाम धनवंती देवी और अन्य, (1996) 6 एससीसी 44 के मामले में इस न्यायालय की निम्नलिखित टिप्पणियों का उल्लेख करना भी प्रासंगिक होगा:

"9..... न्यायमूर्ति द्वारा निर्णय देते समय कही गई हर बात एक दृष्टान्त नहीं बनती। किसी न्यायमूर्ति के निर्णय में किसी पक्ष को बाध्य करने वाली एकमात्र चीज वह सिद्धांत है जिस पर मामले का निर्णय किया जाता है और इस कारण से किसी निर्णय का विश्लेषण करना और उससे अनुपात निर्णय को अलग करना महत्वपूर्ण है। उदाहरणों के सुस्थापित सिद्धांत के अनुसार, प्रत्येक निर्णय में तीन बुनियादी अभिधारणाएँ होती हैं (i) भौतिक तथ्यों के निष्कर्ष, प्रत्यक्ष और अनुमानात्मक। तथ्यों का अनुमानात्मक निष्कर्ष वह निष्कर्ष है जो न्यायमूर्ति प्रत्यक्ष, या बोधगम्य तथ्यों से निकालता है; (ii) तथ्यों द्वारा प्रकट की गई विधिक समस्याओं पर लागू कानून के सिद्धांतों का विवरण; और (iii) उपरोक्त के संयुक्त प्रभाव के आधार पर निर्णय। एक निर्णय केवल उसके लिए एक प्राधिकार है जो वह वास्तव में निर्णय लेता है। किसी निर्णय में जो सार है वह उसका अनुपात है और न ही उसमें पाया गया प्रत्येक अवलोकन और न ही निर्णय में की गई विभिन्न टिप्पणियों से तार्किक रूप से क्या अनुसरण होता है। प्रत्येक निर्णय को सिद्ध किए गए विशेष तथ्यों पर लागू होने के रूप में पढ़ा जाना चाहिए, या सिद्ध माना जाना चाहिए, क्योंकि वहां पाए जाने वाले अभिव्यक्तियों की व्यापकता का उद्देश्य पूरे कानून की व्याख्या करना नहीं है, बल्कि विशेष तथ्यों द्वारा शासित और योग्य है। वह मामला जिसमें ऐसी अभिव्यक्तियाँ पाई जानी हैं। इसलिए, निर्णय से यहां-वहां एक वाक्य निकालना और उस पर आगे बढ़ना लाभदायक नहीं होगा क्योंकि निर्णय का सार उसका अनुपात है न कि उसमें पाया गया

> प्रत्येक अवलोकन। कारण या सिद्धांत का प्रतिपादन, जिस पर न्यायालय के समक्ष किसी प्रश्न का निर्णय लिया गया है, एक दृष्टान्त के रूप में बाध्यकारी है। अकेले ठोस निर्णय पक्षों के बीच बाध्यकारी होता है, लेकिन यह निर्णय के विषय-वस्तु के संबंध में निर्णय के विचार पर तय किया गया अमूर्त अनुपात निर्णय होता है, जिसमें अकेले कानून का बल होता है और जो, जब यह होता है यह स्पष्ट है कि यह क्या था, बाध्यकारी है। यह केवल निर्णय में निर्धारित सिद्धांत है जो संविधान के अनुच्छेद 141 के तहत बाध्यकारी कानून है। किसी मामले में उठने वाले या विवाद में डाले गए किसी प्रश्न पर बहस सुनने के बाद आया एक जानबूझकर किया गया न्यायिक निर्णय एक दृष्टान्त बन सकता है, चाहे किसी भी कारण से, और लंबी मान्यता से दृष्टान्त वाले निर्णय के नियम में परिपक्व हो सकती है। यह मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर कानून के लागू होने से कटौती योग्य नियम है जो इसके अनुपात निर्णय का गठन करता है।

39. विभिन्न निर्णयों का अनुपात निर्णय, जो राज्य और आरपीएससी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत किया गया है, प्रत्यर्थीगण के मामले का इस हद तक समर्थन नहीं करता है कि भले ही प्रतीक्षा सूची वैध और सक्रिय बनी रहे, जब उम्मीदवार ने मुख्य सूची में नियुक्ति की पेशकश की हो शामिल नहीं हुआ है, तो इस सिद्धांत को लागू करके राहत नहीं दी जा सकती कि प्रतीक्षा सूची में शामिल उम्मीदवार के पास कोई विधिक रूप से लागू करने योग्य अधिकार नहीं है। कम से कम एक परिस्थिति में, जैसा कि विभिन्न निर्णयों में माना गया है, जिसका हमने यहां ऊपर उल्लेख किया है, दोनों पक्षों द्वारा अवलंब किया गया है, जहां मुख्य गुणागुण सूची में चयनित उम्मीदवार नियुक्ति की पेशकश के बावजूद शामिल नहीं होता है और प्रतीक्षा सूची वैध रहती है और ऑपरेटिव, राज्य प्रतीक्षा सूची को संचालित करने के लिए बाध्य होगा जब तक कि राज्य, तथ्यों के आधार पर, प्रतीक्षा सूची को संचालित न करने का निर्णय नहीं लेता है और उस निर्णय की मनमाना, तर्कहीन या दुर्भावनापूर्ण के रूप में निंदा नहीं की जा सकती है।

40. **<u>डॉ. राकेश मीना बनाम राजस्थान लोक सेवा आयोग और अन्य (सुप्रा.)</u>** के मामले में

इस न्यायालय की खंडपीठ के निर्णय पर भारी निर्भरता रखी गई है, जिसमें, इस न्यायालय ने वैधता, संचालन और समाप्ति की वैधानिक योजना पर विचार किया था। आरक्षित सूची और यह अभिनिर्धारित किया गया कि छह माह के बाद, सूची स्वयं समाप्त हो जाएगी।

यह नोट करना प्रासंगिक है कि **डॉ. राकेश मीना बनाम राजस्थान लोक सेवा आयोग और अन्य (सुप्रा.)** के मामले में निर्णय से पहले इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा दिए गए सभी निर्णय, राज्य के तहत विभिन्न सेवाओं के बावजूद पैरा मैटेरिया प्रावधान से संबंधित थे। आरक्षित सूची की तैयारी, संचालन और समाप्ति से संबंधित सभी नियम पैरा मैटेरिया हैं। आरक्षित सूची की तैयारी और संचालन के संबंध में नियम की सटीक भाषा पर जैसा कि

डॉ. राकेश मीना बनाम राजस्थान लोक सेवा आयोग और अन्य (सुप्रा.) के मामले में, राज्य के मामलों में इस न्यायालय की खंडपीठ के निर्णय **राजस्थान एवं अन्य बनाम सरिता चौधरी एवं अन्य (सुप्रा.) एवं राजस्थान लोक सेवा आयोग, अजमेर बनाम अलका अग्रवाल एवं अन्य (सुप्रा.)** में **डॉ. राकेश मीना बनाम राजस्थान लोक सेवा आयोग एवं अन्य (सुप्रा.)** मामले में निर्णय से पहले स्पष्ट रूप से कहा गया कि प्रतीक्षा करें जब मुख्य सूची में चयनित उम्मीदवारों को नियुक्ति का प्रस्ताव दिया जाता है और अंततः जब वे शामिल नहीं होते हैं तो सूची का संचालन शुरू हो जाएगा। डॉ**. राकेश मीना बनाम राजस्थान लोक सेवा आयोग और अन्य (सुप्रा.)** के मामले में उपरोक्त दो निर्णयों को इस न्यायालय की खंडपीठ के ध्यान में नहीं लाया गया था, जो निर्णय 03.04.2018 को सुनाया गया था। सम्मान के साथ, हमें यह मानना होगा कि उक्त निर्णय को बाध्यकारी दृष्टान्त के रूप में उद्धृत नहीं किया जा सकता है।

उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य बनाम सिंथेटिक्स एंड केमिकल्स लिमिटेड और अन्य, (1991) 4 उच्चतम न्यायालय केस 139, के मामले में। यह माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया था:-

> "40. 'इंकुरिया' का शाब्दिक अर्थ है 'लापरवाही'। व्यवहार में प्रति इंक्यूरियम का अर्थ प्रति इग्नोरेटियम प्रतीत होता है। अंग्रेजी न्यायालयों ने निर्णय के नियम को शिथिल करने के लिए इस सिद्धांत को विकसित किया है। 'क़ानून में उद्धृत करने योग्य' को टाला जाता है और अनदेखा कर दिया जाता है यदि इसे 'किसी क़ानून या अन्य बाध्यकारी प्राधिकारी

की अज्ञानता में' प्रस्तुत किया जाता है। (यंग बनाम ब्रिस्टल एयरप्लेन कंपनी लिमिटेड (1944 1 केबी 718)। संविधान के अनुच्छेद 141 की व्याख्या करते समय इस न्यायालय द्वारा इसे स्वीकार, अनुमोदित और अपनाया गया है जो कानून के मामले के रूप में दृष्टान्त के सिद्धांत का प्रतीक है। जयश्री साहू में बनाम राजदीवान दुबे, (1962) 2 एससीआर 558 में इस न्यायालय ने एक पीठ के समक्ष विरोधाभासी निर्णय रखे जाने पर अपनाई जाने वाली प्रक्रिया की ओर इशारा करते हुए इंग्लैंड के हेल्सबरी कानूनों से एक अंश निकाला जिसमें अपीलीय न्यायालय के बाध्यकारी नहीं निर्णय के दौरान अपवादों में से एक को शामिल किया गया है।

<u>हैदर कंसल्टिंग (यूके) लिमिटेड बनाम गवर्नर, उड़ीसा राज्य के मुख्य अभियंता के माध्यम से, (2015) 2 उच्चतम न्यायालय केस 189</u> के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के एक अन्य निर्णय में, *प्रति-इनक्यूरियम* के सिद्धांत को नीचे बताया गया था:-

"46. इससे पहले कि मैं उपरोक्त निर्णयों की सत्यता पर विचार करूं, "प्रति इंक्यूरियम" की अवधारणा पर विस्तार से चर्चा करना आवश्यक होगा। लैटिन अभिव्यक्ति "प्रति इंक्यूरियम" का शाब्दिक अर्थ "अनजाने के माध्यम से" है। ऐसा कहा जा सकता है कि किसी निर्णय को प्रति इन्क्यूरियम तब दिया जाता है जब रिकॉर्ड न्यायालय ने अपने किसी पिछले निर्णय की अज्ञानता में कार्य किया हो, या किसी अधीनस्थ न्यायालय ने रिकॉर्ड न्यायालय के किसी निर्णय की अज्ञानता में कार्य किया हो। जहां तक इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों का संबंध है, यह नहीं कहा जा सकता है कि इस न्यायालय ने किसी दिए गए विषय पर "कानून की घोषणा" की है, यदि प्रासंगिक कानून पर इस न्यायालय द्वारा अपने निर्णय में उचित रूप से विचार नहीं किया गया था। इस संबंध में, मैं उत्तर प्रदेश राज्य *बनाम सिंथेटिक्स एंड केमिकल्स लिमिटेड,* (1991) 4 एससीसी 139 का उल्लेख करता हूं।, जिसमें आर.एम. सहाय, जे. ने अपनी सहमति में इस प्रकार कहा: (एससीसी पृष्ठ 162,

पैरा 40)

> "40. 'इनक्यूरिया' का शाब्दिक अर्थ है 'लापरवाही'। व्यवहार में प्रति इंक्यूरियम का अर्थ प्रति अज्ञानता प्रतीत होता है। अंग्रेजी अदालतों ने निर्णय के नियम में ढील देने के लिए इस सिद्धांत को विकसित किया है। 'कानून में उद्धृत करने योग्य' को टाला जाता है और यदि ऐसा है तो इसे नजरअंदाज कर दिया जाता है। इसका प्रतिपादन किया गया, 'किसी क़ानून या अन्य बाध्यकारी प्राधिकारी की अज्ञानता में'।"

47. इसलिए, मेरा मानना है कि समान तथ्यों और कानून पर इस न्यायालय का पूर्व निर्णय बाद के मामले में न्यायालय को कानून के समान बिंदुओं पर बाध्य करता है। असाधारण परिस्थितियों में, जहां स्पष्ट असावधानी या निरीक्षण के कारण, कोई निर्णय किसी स्पष्ट वैधानिक प्रावधान या अनिवार्य प्राधिकारी को तर्क और परिणाम के विपरीत चलने में विफल रहता है, प्रति इंक्यूरियम का सिद्धांत लागू हो सकता है। उक्त सिद्धांत फ़्यूरस्ट डे लॉसन लिमिटेड बनाम जिंदल एक्सपोर्ट्स लिमिटेड, (2001) 6 एससीसी 356 में भी देखा गया था।

41. उपरोक्त विचार के मद्देनजर, हमें यह मानना होगा कि, वर्तमान मामले में, 1973 के नियमों के नियम 20 की योजना के तहत, जैसा कि इस न्यायालय के विभिन्न खंडपीठ के निर्णयों में समझाया और व्याख्या किया गया है, प्रतीक्षा सूची शुरू होगी तब संचालित करने के लिए जब मुख्य गुणागुण सूची में रखे गए उम्मीदवारों को नियुक्ति की पेशकश की गई थी और वे शामिल नहीं हुए थे।

42. वर्तमान मामले की एक और अनोखी विशेषता है जिसका आरक्षित सूची के संचालन पर प्रभाव पड़ता है। इसमें कोई विवाद नहीं है कि जब आरपीएससी ने 16.10.1997 को राज्य सरकार को सिफारिशों के साथ मुख्य सूची भेजी, तो एक पीड़ित उम्मीदवार डॉ. कमल नारायण गुप्ता ने इस न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका दायर की। (एकलपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 6702/1997) जो नियुक्ति की प्रक्रिया को चुनौती देती है, जिसमें 05.01.1998 को चयन/नियुक्ति की प्रक्रिया पर रोक लगाते हुए एक अंतरिम आदेश पारित किया गया था। अंतरिम आदेश 20.04.1998 को रिट याचिका

खारिज होने तक जारी रहा। जाहिर है, प्रतीक्षा सूची 05.01.1998 से 20.04.1998 की अवधि के बीच क्रियाशील नहीं रह सकी। प्रत्यर्थीगण ने स्वयं सूची को 20.04.1998 के बाद भी क्रियाशील माना क्योंकि गुणागुण सूची में दो चयनित उम्मीदवारों की नियुक्ति आदेश; यहां प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 (रिट याचिका में प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6) 22.04.1998 को जारी किया गया था। वह नियुक्ति आदेश स्वयं प्रत्यर्थीगण द्वारा एक अतिरिक्त शपथ-पत्र के साथ दाखिल किया गया है। चूंकि 05.01.1998 से 20.04.1998 तक की पूरी अवधि को प्रतीक्षा सूची की वैधता/मुद्रा की गणना के प्रयोजनों के लिए बाहर रखा जाना था, इसलिए प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 की नियुक्ति का आदेश (प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6) रिट याचिका) **राजस्थान राज्य और अन्य बनाम सरिता चौधरी और अन्य (सुप्रा.), राजस्थान लोक सेवा आयोग, अजमेर बनाम अलका अग्रवाल और अन्य (सुप्रा.) और राजस्थान राज्य और अन्य बनाम घनश्याम खटीक और अन्य (सुप्रा.),** के मामलों में इस न्यायालय की खंडपीठ के निर्णय के मद्देनजर 22.04.1998 को जारी की गई थी। प्रतीक्षा सूची केवल 22.04.1998 से संचालित होगी और 1973 के नियमों के नियम 20 के अनुसार अगले छह महीनों 22.10.1998 तक के लिए वैध रहेगी।

43. राज्य यह बताने में विफल रहा है कि उसने छह माह की अवधि के दौरान आरपीएससी से प्रतीक्षा सूची की मांग क्यों नहीं की। यह राज्य का मामला नहीं है कि राज्य ने प्रतीक्षा सूची को संचालित न करने के लिए प्रासंगिक विचारों पर एक सचेत नीतिगत निर्णय लिया था। इसके अभाव में, 22.04.1998 से शुरू होने वाली छह माह की प्रतीक्षा सूची के संचालन में राज्य की ओर से निष्क्रियता अवैध और मनमानी होगी और ऐसे मामलों में, यदि प्रतीक्षा सूची के उम्मीदवार कानून की न्यायालय में जाते हैं, तो तारीख प्रदान की जाएगी रिट याचिका दायर करने का अधिकार, प्रतीक्षा सूची की मुद्रा और वैधता के कारण दिए जाएंगे, **पुरूषोत्तम बनाम अध्यक्ष, एमएसईबी और अन्य (सुप्रा.)** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय के मद्देनजर राहत दी जा सकती थी), जिसे यहां ऊपर संदर्भित किया गया है, जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने माना था कि जिस पद के लिए उम्मीदवार का चयन किया गया है, उसके खिलाफ नियुक्त होने का अधिकार इस बहाने से नहीं छीना जा सकता है कि उक्त पैनल में है इस बीच समय सीमा समाप्त हो गई और पद पहले ही किसी और द्वारा भर दिया गया है। ऐसे मामलों में जहां पद पर नियुक्त होने का अधिकार नियोक्ता द्वारा अवैध रूप से छीन लिया गया है जैसे कि

ऐसे मामले में जहां मुख्य सूची में चयनित उम्मीदवारों के शामिल न होने के कारण रिक्तियां खाली रह जाती हैं और प्रतीक्षा सूची चालू रहती है। प्रतीक्षा सूची में शामिल उम्मीदवार को नियुक्ति के लिए विचार किए जाने का अधिकार है। माननीय उच्चतम न्यायालय ने **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य बनाम हरीश चंद्र और अन्य (सुप्रा.)** के मामले में यही देखा है।

44. विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश को चुनौती देने के लिए राज्य और आरपीएससी द्वारा उठाए गए गंभीर मुद्दों में से एक यह है कि किसी भी मामले में, प्रत्यर्थीगण द्वारा रिट याचिका तब दायर की गई थी जब गुणागुण सूची पहले ही समाप्त हो चुकी थी और अब अस्तित्व में नहीं थी, इसलिए , राहत नहीं दी जा सकी। हमारे समक्ष यह तर्क दिया गया है कि भले ही यह माना जाए कि गुणागुण सूची 22.04.1998 को लागू होनी शुरू होगी जब प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 (रिट याचिका में प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6) को नियुक्ति की पेशकश की गई थी, लेकिन वे शामिल नहीं हुए तो छह माह की अवधि 22.10.1998 को समाप्त हो जाएगी। यह ऐसा मामला नहीं है जहां याचिका तब दायर की गई थी जब सूची मौजूद थी और यह कहना था कि रिट याचिकाकर्तागण को उन रिक्तियों के खिलाफ नियुक्ति के लिए विचार किए जाने का मौजूदा अधिकार था जो यहां प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5 के शामिल न होने के कारण खाली रह गई थीं। (रिट याचिका में प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6), केवल इस आधार पर, रिट याचिका खारिज की जानी चाहिए। इस तर्क के समर्थन में, राज्य और आरपीएससी के विद्वान अधिवक्ता ने **बिहार राज्य और अन्य बनाम अमरेंद्र कुमार मिश्रा, (2006) 12 उच्चतम न्यायालय केस 561 और उडीसा और अन्य बनाम राजकिशोर नंदा और अन्य, एआईआर 2010 उच्चतम न्यायालय 2100,**राज्य के मामलों में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर अवलंब जताया है। जिस पर **डॉ. राकेश मीना बनाम राजस्थान लोक सेवा आयोग और अन्य (सुप्रा.)** के मामले में इस न्यायालय की खंडपीठ ने अवलंब किया था, जहां तक यह है मुद्दा चिंतित है. हमारा ध्यान माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **यूपी राज्य और अन्य बनाम हरीश चंद्र और अन्य (सुप्रा.)** के मामले में की गई इसी तरह की टिप्पणियों की ओर भी आकर्षित किया गया है।

45. इस संबंध में विधिक स्थिति पर माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **यूपी राज्य और अन्य बनाम हरीश चंद्र और अन्य (सुप्रा.)** के मामले में विचार किया गया है, इसे निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया था: -

"इस संदर्भ में अगला सवाल यह उठता है कि क्या रिट याचिकाकर्तागण की भर्ती करने के लिए अपीलार्थी को परमादेश जारी करना उच्च न्यायालय के लिए उचित था। संविधान के तहत न्यायालय द्वारा एक परमादेश जारी किया जा सकता है जब आवेदक यह स्थापित करता है कि उसके पास उस पक्ष द्वारा विधिक कर्तव्य के प्रदर्शन का विधिक अधिकार है जिसके खिलाफ परमादेश मांगा गया है और कहा गया है कि याचिका की तारीख पर यह अधिकार विद्यमान था। कर्तव्य जो परमादेश द्वारा सौंपा जा सकता है वह संविधान या क़ानून या नियमों या क़ानून के बल वाले आदेशों द्वारा लगाया जा सकता है। लेकिन इसलिए सरकार को कानून के प्रावधानों को लागू करने से परहेज करने या कानून के विपरीत कुछ करने का निर्देश देने के लिए परमादेश जारी किया जा सकता है...

लेकिन साथ ही हमारे लिए उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देश को कायम रखना मुश्किल है क्योंकि, माना जाता है कि 4.4.1987 को तैयार की गई चयन सूची का कार्यकाल बहुत पहले ही समाप्त हो चुका था और जो प्रत्यर्थी इस पर नियुक्त होने के अपने अधिकारों का दावा करते हैं जिस दिन उन्होंने उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया, उस दिन ऐसी सूची के आधार पर उनका अस्तित्व में रहने का अधिकार नहीं था।''

46. उपरोक्त दृष्टिकोण को माननीय उच्चतम न्यायालय ने **<u>बिहार राज्य और अन्य बनाम अमरेंद्र कुमार मिश्रा (सुप्रा.)</u>** के मामले में, **<u>यूपी राज्य और अन्य बनाम हरीश चंद्र और अन्य (सुप्रा.)</u>** के मामले में की गई टिप्पणियों पर अवलंब करते हुए दोहराया था।

पुनः **<u>उड़ीसा राज्य और अन्य बनाम राजकिशोर नंदा और अन्य (सुप्रा.)</u>** के मामले में, जहां तथ्यों पर, यह पाया गया कि व्यक्ति ने चयन सूची की समाप्ति के बाद न्यायालय का दरवाजा खटखटाया था, इसे नीचे दिया गया था: -

"15. चयन सूची को नियुक्तियों के प्रयोजन के लिए भंडार के रूप में नहीं माना जा सकता है, आवश्यकता पड़ने पर उस सूची से नाम लेकर उस रिक्ति को भरा जा सकता है।

यह स्थापित विधिक प्रस्ताव है कि यदि उम्मीदवार चयन सूची की

समाप्ति के बाद न्यायालय का दरवाजा खटखटाता है तो उसे कोई राहत नहीं दी जा सकती है। यदि चयन प्रक्रिया समाप्त हो गई है, चयन सूची समाप्त हो गई है और नियुक्तियाँ की जा चुकी हैं, तो न्यायालय द्वारा विलंबित चरण में कोई राहत नहीं दी जा सकती है। (वीडियो जे. अशोक कुमार बनाम आंध्र प्रदेश राज्य और अन्य, (1996) 3 जेटी (एससी) 225; बिहार राज्य और अन्य बनाम मोहम्मद कलीमुद्दीन और अन्य, एआईआर 1996 एससी 1145: (1196 एआईआर एससीडब्ल्यू) 691); उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य बनाम हरीश चंद्र एवं अन्य, एआईआर 1996 एससी 2173: (1996 एआईआर एससीडब्ल्यू 2785); सुषमा सूरी बनाम राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार एवं अन्य, (1999) 1 एससीसी 330 ; उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य बनाम राम स्वरूप सरोज, (2000) 3 एससीसी 699: (एआईआर 2000 एससी 1097: 2000 एआईआर एससीडब्ल्यू 779); के. तुलसीधरन बनाम केरल राज्य लोक सेवा आयोग, त्रिवेन्द्रम एवं अन्य, (2007) 6 एससीसी 190: (एआईआर 2007 एससी (सप्प) 253: 2007 एआईआर एससीडब्ल्यू 3211); दीपा कीज़ बनाम केरल राज्य विद्युत बोर्ड और अन्य, (2007) 6 एससीसी 194: (2007 एआईआर एससीडब्ल्यू 7311); और सुभा बी। नायर एवं अन्य (एआईआर 2008 एससी 2760: 2008 एआईआर एससीडब्ल्यू 4591) (सुप्रा.)।

47. इसलिए, उपरोक्त स्थापित विधिक स्थिति को वर्तमान मामले के तथ्यों में लागू किया जाना चाहिए ताकि यह पता लगाया जा सके कि भले ही आरक्षित सूची 22.04.1998 के बाद ही लागू होगी, रिट याचिकाकर्तागण ने याचिका दायर करके न्यायालय का दरवाजा प्रतीक्षा सूची/आरक्षित सूची की समाप्ति से पहले खटखटाया था। हालाँकि, मामले के रिकॉर्ड से पता चलता है कि रिट याचिका प्रत्यर्थीगण/रिट याचिकाकर्तागण द्वारा आरक्षित सूची की समाप्ति के बाद दायर की गई थी। तथ्यों के आधार पर हम पहले ही कह चुके हैं कि आरक्षित सूची/प्रतीक्षा सूची 22.10.1998 को स्वाभाविक रूप से समाप्त हो गई। रिट याचिकाकर्ता इस न्यायालय से संपर्क करने में विफल रहे और याचिका दायर की, जबकि नियुक्ति पाने का उनका अधिकार अस्तित्व में

था। प्रतीक्षा सूची की वैधता समाप्त होने के बाद रिट याचिकाएँ दायर की गईं।

इसलिए, भले ही प्रत्यर्थी-रिट याचिकाकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उठाए गए अन्य तर्कों पर, जिनसे हम सहमत हुए हैं, वे प्रतीक्षा सूची/आरक्षित सूची के अस्तित्व और वैधता के दौरान केवल इस संबंध में रिट याचिका दायर करने में विफल रहे हैं, रिट याचिकाएँ ख़ारिज होने योग्य थीं। जैसा कि माननीय उच्चतम न्यायालय ने कहा है, संविधान के तहत, न्यायालय द्वारा एक परमादेश जारी किया जा सकता है जब याचिकाकर्ता यह स्थापित करता है कि उसके पास उस पक्ष द्वारा विधिक कर्तव्य के प्रदर्शन का विधिक अधिकार है जिसके खिलाफ परमादेश मांगा गया है और कहा गया अधिकार याचिका की तिथि पर विद्यमान था। तथ्यों के अनुसार, रिट याचिकाकर्तागण को उस तारीख को अधिकार नहीं था, जिस दिन उन्होंने इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया था, सरकार को कानून के प्रावधान को लागू करने से रोकने या कानून के विपरीत कुछ करने का निर्देश देने के लिए कोई परमादेश जारी नहीं किया जा सकता था।

48. परिणामस्वरूप, विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्णय के खिलाफ राजस्थान राज्य और आरपीएससी द्वारा दायर अपील की अनुमति दी जाती है। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश को रद्द कर दिया जाता है और प्रत्यर्थी-रिट याचिकाकर्तागण, डॉ. श्री कृष्ण जोशी और डॉ. श्री मोहन शर्मा द्वारा दायर रिट याचिकाएं खारिज कर दी जाती हैं।

49. लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं।

(अनूप कुमार ढांड) न्यायमूर्ति **(मनिन्द्र मोहन श्रीवास्तव) न्यायमूर्ति**

Sanjay Kumawat-1-2

टिप्पणी: इस निर्णय का हिन्दी अनुवाद निविदा फर्म **राजभाषा सेवा संस्थान** द्वारा किया गया है, जिसे फर्म के निदेशक डॉ. वी.के. अग्रवाल, द्वारा मान्य और सत्यापित किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन व कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।